विकास की वर्तमान पद्धति में गाँधी जी के अर्थिक विचारों की सार्थकता - एक विश्लेषण
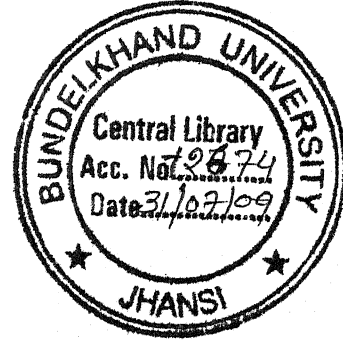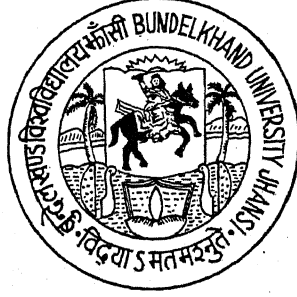
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी (उ.प्र.)

के

अर्थशास्त्र संकाय के अन्तर्गत

डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी की उपाधि हेतु प्रस्तुत

❀ शोध-प्रबन्ध ❀

2007

निर्देशक :

डॉ. रेनू माथुर
रीडर, अर्थशास्त्र संकाय,
बुन्देलखण्ड महाविद्यालय,
झाँसी (उ.प्र.)

शोधार्थी :

अरूण कुमार श्रीवास्तव

2007

This is to certify that the thesis title "Relevance of Gandhian Economic thought in present Economic Development System An analysis" submitted to Bundelkhand University, Jhansi, in fulfillment of the requirements for the award of Degree of Doctor of Philosophy in Arts, Faculty of Economics, embodies to the best of my knowledge and belief, the original work of Arun Kumar Srivastavata S/o Shri Ssrawan Kumar Srivastava, Banda who worked under my supervision and guidance more than two years.

Renu Mathur

(Dr. (Kum) Renu Mathur)

प्रस्तावना

मैंने अपने जीवन के पाँच वर्ष एक ऐसे सामाजिक संगठन में पूर्णकालिक कार्यकर्ता के रूप में व्यतीत किये जहाँ मैंने चरित्र निर्माण व व्यक्ति निर्माण का कार्य किया व इसके साथ ही समाज को वस्तु स्थिति का अध्ययन किया। जिससे मैं समाज के प्रति संवेदनशीलता को सीख सका। सामाजिक जीवन के साथ–साथ मैंने अपनी शिक्षा को सतत् जारी रखा। अर्थशास्त्र मेरा प्रिय विषय प्रारम्भ से ही था। एम0ए0 (परास्नातक) करने के पश्चात् मुझे आगे शिक्षा प्राप्त करने की लालसा ने अनुसंधान करने को प्रेरित किया।

सामाजिक जीवन की पृष्ठभूमि व महात्मा गाँधी के प्रति बाल्यकाल से मेरा आकर्षण ही वह कारण बना जिसके कारण मैंने गाँधी जी को ही अपने अनुसंधान का विषय बनाया। मैं गाँधी जी के संदर्भ में ऐसी खोज करना चाहता था जिसके द्वारा मैं उनके विचारों की वर्तमान संदर्भों में आर्थिक परिप्रेक्ष्य में तुलना कर गाँधी जी की वर्तमान संदर्भों में प्रासंगिकता खोजने का प्रयत्न करने का प्रयास किया है।

अनुसंधान के कार्य की सफलता का श्रेय में अपनी निर्देशिका डा0 रेनू माथुर जी को देना उचित समझता हूँ क्योंकि उनके मार्गदर्शन में ही यह कार्य सफल हो सका। समय–समय पर उन्होंने मुझे मार्गदर्शन दिया जिससे मैं अनुसंधान की बारीकियों को समझ सका। अनुसंधान कार्य में मुझे मेरे माता–पिता श्री श्रवण कुमाार श्रीवास्तव, श्रीमती चन्द्रावती व बड़े भाई श्री विनय कुमार श्रीवास्तव के द्वारा बाल्यपन से निरन्तर दी जा रही प्रेरणा के द्वारा ही यह कार्य सम्पन्न कर पाया। मेरे आत्मीय मित्र इंजीनियर कमलेश कुमार वाजपेयी ने मुझे इस कार्य को

करने में हमेशा सहयोग प्रदान किया जिससे सफलता पास आ गई। इसके साथ ही टंकण कार्य करने वाले श्री सुन्दर लाल कुशवाहा मे0 जे0पी0 कम्प्यूटर्स, झाँसी धन्यवाद के पात्र हैं इन्होंने मेरा पूरा सहयोग दिया। मेरे अनुसंधान के कार्य में डा0 चन्द्रकान्त अवस्थी का सहयोग अत्यन्त महत्वपूण हैं शायद उनके बिना यह कार्य पूर्ण न होता। अतः मैं उन्हें भी साधुवाद ज्ञापित करता हूँ। श्री चन्द्रशेखर तिवारी जो एक स्वयंसेवी संगठन के अच्छे कार्यकर्ता हैं उनको भी साधुवाद देता हूँ जिन्होंने एक मित्र के नाते मुझे प्रेरणा दी।

मैंने अपने कार्य को पूर्ण निष्ठा व ईमानदारी से किया, ईश्वर इसका साक्षी है। मेरा प्रयास कितना सार्थक हुआ इसका मूल्यांकन तो भविष्य के गर्भ में छिपा है। परन्तु मैं गाँधी जी के प्रति इस कार्य के कारण और अधिक आत्मिक रूप से समर्पित हो गया। अपने इस कार्य को मैं अपने माता–पिता के श्री चरणों में ही समर्पित करता हूँ।

अन्त में उस सर्वशक्तिमान ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण के साथ उसकी शरणागत होते हुए अपने कार्य को समर्पित करता हूँ। क्योंकि उसकी प्रेरणा कृपा और इच्छा के बिना पत्ता तक नहीं हिलता, तो में यह कार्य कैसे कर सकता था। इसी का स्मरण मुझे कार्य की सदैव प्रेरणा देता रहे, सदैव आगे बढ़ाता रहे इसी भावना के साथ पूर्ण करता हूँ।

ऊँ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात, पूर्णमुदच्यते,

पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवाव शिष्यते।

अरूण कुमार श्रीवास्तव
ग्राम – अनौसा
पो० सिमौनी,
जिला – बाँदा (उ०प्र०)

विषय - सूची

अध्याय - १

अध्याय - 1

गाँधी जी का परिचय

मोहनदास करमचन्द गाँधी जी हमारे देश के एक ऐसे व्यक्तित्व है जो किसी परिचय के लिये नहीं उनके कार्यों कृत्यों व सत्य अहिंसा के लिये स्वयं ही स्वनाम धन्य हो गये हैं। अपने विचारों का उन्होंने समाज के ऊपर एक गहरा प्रभाव छोड़ा है। वास्तव में गाँधी जी अर्थशास्त्री नहीं थे वे तो अर्थशास्त्र के विद्यार्थी भी नहीं थे उन्होंने तो विधि विषय का अध्ययन किया था। परन्तु देश की स्थिति व आर्थिक उन्नति व समग्र समाज के कल्याण के लिये जो विचार दिये वे निश्चित ही यह प्रमाणित करते हैं कि उनकी अर्थशास्त्र पर अच्छी पकड़ थी उनके आर्थिक विचार उन्हें एक कुशल अर्थशास्त्री प्रमाणित करने के लिये पर्याप्त है।

गाँधी जी भारत जैसे कृषि प्रधान देश, के विकास के लिये ग्रामीण विकास पर बल दिया करते थे। इसी कारण उन्होंने कुटीर उद्योगों की स्थापना पर बल दिया जिससे क्षेत्रीय संतुलन स्थापित किया जा सके व अधिक से अधिक लोगों को रोजगार दिया जा सके क्योंकि तात्कालिक समय में 90 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण अंचल में रहती थी व कृषि कार्यों से जुड़ी हुई थी। इसी प्रकार उन्होंने आवश्यकतानुसार ही सामग्री ग्रहण करने का आग्रह किया जिससे सभी की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके व प्राकृतिक संसाधनों का भी दीर्घकालीन प्रयोग किया जा सके। जिससे उनका मितव्ययी प्रयोग सम्भव हो सके।

दैनिक जीवन में आत्मसंयम का उन्होंने प्रबल समर्थन किया। गाँधी जी के जीवन पर यदि विहंग्म दृष्टि डालते हैं तो हम पाते हैं कि वह बहु आयामी तथा विविध रंगों से भरा हुआ है।

गाँधी जी एक परिचय

दर्शन :

गाँधी का दर्शन पर यदि हम विह्ंगम दृष्टि डालते हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि उनके दर्शन का मूल सत्य ही है। इस संदर्भ में कहा जा सकता है कि ''दुर्लध्य मार्गों को लांघों, क्रोध को अक्रोध से और असत्य को सत्य से जीतो'' – सामवेद सत्य है जीतता है, झूठ नहीं सत्य का ही वह मार्ग है जिस पर देव, अर्थात् विद्वान लोग चलते हैं। इसी मार्ग पर चलकर अपनी सब कामनाओं को पूर्ण कर चुकने वाले ऋषि उस ब्रह्म में लीन होकर मुक्त हो जाते हैं जो सत्य का परम् निधान है।

गाँधी जी ने अपने जीवन में सत्य का जो व्रत लिया उसे सतत् प्रयत्न करके निर्विध्न करने का प्रयत्न किया इस प्रयास के लिये उन्होंने एकादश व्रत बनाये थे और उनका दृढ़ निश्चय था कि इसके बिना व्यक्ति पूर्ण नहीं हो सकता।

सत्य :

सत्य वह तत्व है जिसका पालन ईमानदारी की सर्वोत्तम नीति है। सत्य के व्रत का तात्पर्य है कि हमें अपना सारा जीवन किसी भी कीमत पर सत्य से ही अनुशासित रखना है। सत्याग्रह में शारीरिक बल

का प्रयोग नहीं होता और न ही शत्रु के नाश की कामना न ही शास्त्र का प्रयोग और हाथ ही द्वेष का पूर्णतः आभाव रहता है। सत्य का मार्ग विशुद्ध रूप से आत्मिक शक्ति उत्पन्न करता है। जिससे सत्य स्वरूप आत्मदर्शन होताहै। इस मार्ग पर पराजय का प्रश्न ही नहीं क्योंकि सतय के मार्ग पर चलने वाला परेशान अवश्य हो सकता है परन्तु पराजित कभी नहीं हो सकता।

अहिंसा :

अहिंसा का स्थूल तात्पर्य है प्रहार न करना व व्यापक अर्थों में अपने व्यवहार व आचरण से किसी के मन को न दुखाना। इसकी श्रेष्ठ स्थिति वह है जब किसी के प्रति मन में भी कुविचार न उत्पन्न हो व प्राणी मात्र के प्रति दुर्भाव की समाप्ति हो जाये। अहिंसा एक महाव्रत है इसके पालन के लिये तपश्चर्य की आवश्यकता रहती है और यह त्याग और ज्ञान से ही फलीभूत होती है। एक महत्व पूर्ण तथ्य यह भी है कि जिसमें स्वामित्व या मालिकपन का मोह है वह अहिंसा का पालन नहीं कर सकता।

ब्रह्मचर्य :

सत्य और अहिंसा का पालन तभी सम्भव है जब ब्रह्ममचर्य का पालन किया जाय। एक ब्रह्मचर्य व्रत पालन करने वाले को सदैव मन और शरीर दोनों से निर्मित होना चाहिए। गाँधी जी ने विकारमय स्पर्श, विकारमय भाषण तथा विकारमय चेष्टा को भी स्थूल ब्रह्ममचर्य का खण्डन या भंग माना है।

ब्रह्मचर्य का पालन मन, वचन, व कर्म से हो तभी वह सफल हो सकता है।

अस्वाद :

व्यक्ति जब तक जीभ के स्वाद पर विजयी नहीं होती तब तक ब्रह्मचर्य का पालन अति कठिन है। भोजन भोग या स्वाद के लिये न होकर केवल शरीर के संचालन व स्वस्थ्य रखने के उद्देश्य से किया जाना चाहिए। इसी लिये इसे औषधि मानकर संयमपूर्वक किया जाना ही आवश्यक है।

अस्तेय :

दूसरे के धन व वस्तु को अपना न मानना व उसकी अनुमति के बिना उसे न ग्रहण करना तथा जो वस्तु जिस उपयोग के लिये हो व जितने समय के लिये हो उससे उतने ही समय प्रयोग करना। अनधिकार चेष्ठा चोरी ही समझी जायेगी। अपनी आवश्यकता से अधिक लेना चोरी ही है।

अपरिग्रह :

अपनी आवश्यकता के लिये ही ग्रहण करना उससे अधिक संग्रह करना चोरी की श्रेणी में माना जाता है। क्योंकि संग्रह की प्रवृत्ति दूसरे के अधिकार पर अतिक्रमण है।

शारीरिक श्रम :

अपरिग्रह का व्रत तभी सफल हो सकता है जब अपनी आवश्यकताओं की पर्ति के लिये शारीरिक श्रम किया जाये। इससे

व्यक्ति सामाजिक व आत्मद्रोह से बच सकता है।

शारीरिक सुदृढ़ व स्वास्थ्य की दृष्टि से भी शारीरिक श्रम अनिवार्य है। श्रम द्वारा प्राप्त साधन आत्मिक सुख की अनुभूति प्रदान करते हैं।

स्वदेशी :

स्वदेशी का भाव आत्म सम्मान का भाव है व आर्थिक स्वलम्बन का भाव है। व्यक्ति ईश्वर नहीं हैं परन्तु वह अपने आसपास व पड़ोसी की सेवा करके ईश्वर की सेवा की अनुभूति प्राप्त करता है। देश में जो वस्तु बनती हो या बनायी जा सकती हो वह विदेशों से न आयातित हो। स्वदेशी में स्वार्थ नहीं बल्कि परोपकार छिपा है। स्वदेशी का भाव आर्थिक स्वावलम्बन दे सकता है।

अभय :

सत्य की राह पर चलने वाला भय मुक्त होता है, वह निष्पक्ष होता है इसी कारण वह अपने किसी भी स्वार्थ का तिलांजलि देकर अभय होकर सत्य के मार्ग पर चलता है। सत्य अहिंसा के मार्ग पर चलने वाले को स्वभाव से ही भय नहीं लगता।

अस्पर्शता :

अस्पर्शता समाज के लिये कलंक है उसके लिये सत्य के मार्ग पर कोई स्थान नहीं है। यह धारण समाज की समग्र उन्नति में बाधक है व जाति भेद को प्रोत्साहित करती है। इसलिये अस्पर्शता का नितांत आभाव ही सफलता का मंत्र है।

सहिष्णुता :

सहिष्णता का तात्पर्य है सभी प्राणी मात्र के प्रति मन में करूणा का भाव रखना व उसका प्रकटीकरण मन, वचन व कर्म से हो जो भाव हम अपने धर्म के प्रति रखते हैं वही दूसरों के धर्म के प्रति रखने चाहिये। ऐसी भावना के पुष्ट व बलवान होने पर सर्वधर्म सम्भाव जाग्रह होता है। तब एक दूसरे के धर्म का विरोध नहीं होता और न ही दूसरे धर्मावलम्बी के अपने धर्म में लाने की चेष्टा की जाती है। धर्मांत्तर की आवश्यकता ही नहीं रह जाती। गाँधी जी अपनी प्रार्थना में कहा करते हैं –

"रघुपति राघव राजा राम, पतित पावन सीताराम,
ईश्वर, अल्ला तेरे नाम सबको सम्मति दे भगवान"।

एकादश व्रत को गाँधी जी ने मूलमंत्र माना व उन्होंने माना कि इससे एक ऐसे भारत का निर्माण होगा जिसमें गरीबों में भी इस देश के प्रति अपनत्व का भाव प्रबल होगा। जिसके निर्माण व उन्नति में उनका भी योगदान है।

गाँधी जी का मत है कि मनुष्य ईश्वर की श्रेष्ठ रचना है यह सर्वोपरि है। यह कभी भी मशीन से श्रेष्ठ नहीं हो सकता और न ही मशीन का दास हो सकता है। मशीन निर्जीव है। यह चेतनायुक्त मनुष्य से ही नियंत्रित होती है। अतः मनुष्य से ही होती है। अतः मनुष्य ही श्रेष्ठ है।

पाश्चात्य् सभ्यता भौतिक कल्याण पर अधिक जोर देती है। जबकि गाँधी जी का विचार है कि मनुष्य की अप्रसन्नता का मुख्च कारण उसकी गरीबी है वह धनी बनना चाहता है। उसकी गरीबी का

मुख्य कारण उसकी बढ़ती हुई उन्नत आवश्यकतायें है। ये दुख का कारण है यदि इन आवश्यकताओं पर नियंत्रण कर लिया जाय तो व्यक्ति सुखी हो सकता हैं दुःख का विनाश ही सुख का कारण है। मनुष्य के मस्तिष्क की प्रकृति है कि वह असंस्थिति का त्याग कर संस्थिति प्राप्त करना चाहता है। असंस्थिति के प्रति आकर्षण दुःख है और संस्थिति के प्रति चेतना सुख है। अतः दुःख का सफाया ही सुख है। जब न्यूनतम सुख होगा और दुःख की मात्रा अधिक होती है।

गाँधी जी का दर्शन भारतीय चिन्तन व दार्शनिक आधार पर खड़ा है। इसीकारण उस दर्शन में मानवीय संवदेनायें व आत्मिक सुख का मूल मंत्र विद्यमान है।

जीवनक्रम :

विश्व में व भारत में प्रायः सभी लोग महात्मा गाँधी के नाम से परिचित हैं। गाँधी जी का देश की आजादी में अत्यन्त ही महत्वपूर्ण योगदान है।

गाँधी जी का जन्म 02 अक्टूबर सन् 1869 ई0 में पारेबन्दर (गुजरात) में हुआ उनके पिता श्री करमचन्द्र पोरबन्दर रियासत के दीवान थे वे संयुक्त परिवार में रहते थे। वे अपने चाचा व चचेरे भाईयों के मध्य ही बड़े हुये। गाँधी जी अपने तीनों भाईयों में सबसे छोटे थे। जब ये 7 वर्ष के हुये तो उनके पिता पोरबन्दर से 120 मील उत्तर राजकोट चले गये और यह गाँधी जी का दूसरा घर बना परन्तु पोरबन्दर से निरंतर सम्बन्ध बने रहे। गाँधी जी की माँ पुतलीबाई बड़ी योग्य महिला थीं। राजपरिवार में उनका सम्मान था परन्तु उन्हें अपने

घर व परिवार के कामों में लगे रहना अधिक उपयुक्त लगता था। 1908 ई0 में जब गाँधी जी 39 वर्ष के थे तो एक लेखक ने लिखा है कि "जब वह अपनी माता के विषय में बताते तो उनकी आवाज सौम्य व कोमल हो जाती और आँखें प्रेम से आलोकित हो उठती थीं" अपनी माँ से प्रेरित हो उनके हृदय में जो प्रतिमा नारी की उनके हृदय में अपने माता–पिता के प्रति पूर्ण समर्पण व उनकी आज्ञा का पालन करना उनका मूल–मंत्र हो गया। समय के साथ–साथ अपने शिक्षकों व अन्य बड़े लोगों की आज्ञा का तत्परता से पालन करना उकना अटल नियम बन गया। वे अत्यन्त शर्मीले संकोची व भोले स्वभाव के हो गये। इस पर उन्हें गर्व भी था।

सन् 1886 में गाँधी जी के पिता की मृत्यु हो गयी। 1887 में उन्होंने मैट्रिक पास किया परन्तु घर की आर्थिक दशा खराब हो जाने के बाद भी घर के लोगों ने उन्हें आगे पढ़ाने की व्यवस्था की परन्तु अंग्रेजी माध्यम होने के कारण वे निराश हो गये। अपनी उन्नति के लिये विदेश जाकर शिक्षा पाने का उन्होंने प्रयत्न किया। उनके विदेश जाने का प्रस्ताव का स्वजातीय बड़े लोगों ने विरोध किया परन्तु उनका डटकर मुकाबला कर अपना निश्चय अटल रखा और विदेश यात्रा पर 4 सितम्बर 1888 को रवाना हो गये। अपने आचरण व व्यवहार के प्रति वे वहाँ भी दृढ निष्ठ रहें पढ़ाई में अथक परिश्रम कर उन्होंने वैरिस्टर की उपाधि पायी परन्तु उनके संकोची व नीरू स्वभाव के कारण उनसे अधिक सफल वैरिस्टर होकर धन कमाने की अपेक्षा कोई भी नहीं कर रहा था। परन्तु अपने दृढ़ निश्चय व कठोर परिश्रम के द्वारा उन्होंने

वैरिस्टर की उपाधि और दक्षिण अफ्रीका जाकर वैरिस्टरी करने का निर्णय किया।

दक्षिण अफ्रीका में भारतीय व अन्य अश्वेत हिन्दुओं की स्थिति को देखकर उनकी जीवन की दिशा ही बदल गयी और वे इस अन्य के विरूद्ध संघर्ष करने का संकल्प लिया वहाँ उन्हकें अनेक प्रकार के अत्याचार व अन्यायों का सामना करना पड़ा। एक बार वे प्रथम श्रेणी में रेल यात्रा कर रहे थे वहाँ से उन्हें अग्रेजों ने स्टेशन आने पर गंतव्य से पूर्व सम्मान सहित बाहर फेक दिया क्योंकि वे एक अश्वेत थे। इस घटना ने उनके संघर्ष करने के संकल्प को और भी दृढ़ कर दिया। इसी प्रकार अश्वेत लोगों को अपनी पहचान को प्रमाणित करने के लिये पास या प्रमाण पत्र रखने पड़ते थे। इस अन्याय के विरूद्ध भी उन्होंने संघर्ष किया और वहाँ के स्थानीय समाज व अप्रवासी भारतीय समाज को जाग्रत कर एक जन आंदोलन खड़ा किया। अपने संघर्ष में वे सफल हुये।

वास्तव में गाँधी जी के जीवन की दिशा दक्षिण अफ्रीका से ही बदली और यहाँ से ही वे अपने भौतिक सुखों को त्याग कर समाज के लिये जीने का संकल्प कर आगे बढ़े। जब वे भारत आये तो उन्होंने सम्पूर्ण भारत का दर्शन कर यहाँ वस्तु स्थिति व आत्मा को समझा और उसके पश्चात् अहिंसा का मार्ग अपना कर स्वतंत्रता आंदोलन में कूद गये। भारत की कुरीतियों को भी दूर करने के लिये वे सक्रिय रहे। इसी कारण वे महात्मा कहलाये।

भारत वर्ष का सबसे बड़ा दुर्गुण अस्पर्शता को चुनौती देकर उसे मिटाने में सफलता अर्जित की। उनके इन विचारों को व सफलता

को जितनी मान्यता मिली उतनी मान्यता उनके आर्थिक विचारों को नहीं मिली।

गाँधी जी द्वारा प्रति पादित विकेन्द्रित अर्थ व्यवस्था को यदि किसी ने समझा तो वह ए0 हकसले एक पश्चिमी विद्वान थे। लेकिन ए0 हकसले ने कुछ फेर बदल कर दीं गाँधी जी ने स्वयं कहा था ''यदि मेरी मृत्यु के बाद मुझे बड़ी पीड़ा होगी। आप अनुयायी नहीं बल्कि सहपाठी सहभागी सहदृष्टा और सहकर्मी है। गाँधी जी का दृष्टिकोण जीवन के प्रति समग्र था वे मनुष्य जीवन के हर पहलू की नैतिक मूल्यों की कसौटी पर कसते थे, इसीलिये गाँधी जी के अर्थशास्त्र को नैतिक और अध्यात्मिक दृष्टिकोण के साथ–साथ भारत के अतीत व वर्तमान दशाओं के परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिये। गाँधी जी ने अर्थशास्त्र की रचना नहीं की है उन्होंने तो अर्थनीति का विश्लेषण किया। उनका चिन्तन नीति शास्त्र विषयक मान्यताओं जैसा सादा जीवन समानता सहज बुद्धि तथा भारतीय सामाजिक ढाँचे की सूक्ष्म जानकारी पर आधारित था। यही उनके विचारों की प्रौढ़ता का कारण था।

नैतिकता जनकल्याण विकेन्द्रीकरण सर्वोदय शारीरिक श्रम मानव श्रम सामाजीकरण उनकी अर्थनीति के मूल लक्षण व मंत्र थे। उनका विचार था कि वह अर्थनीति जो किसी व्यक्ति या राष्ट्र के नैतिक स्वास्थ्य को नुकसान पहुँचाती है अनैतिक है और पापपूर्ण है। इसी प्रकार जैसे अर्थनीति एक देश के द्वारा दूसरे देश का शोषण होता है वह अनैतिक होती है तथा शोषण हिंसा का दूसरा रूप है।

गाँधी जी विशेषाधिकार व एकाधिकार से घृणा करते थे वे समाज कल्याण और सामाजिक न्याय पर आश्रित व्यवस्था को नैतिक

व मानवीय मानते थे। वे प्रेम की शक्ति से लोगों में अंहिसा के द्वारा आर्थिक समानता लाने के पक्ष में थे। वे जो कुछ कहते थे उसका अपने ऊपर प्रयोग करते थे। स्वयं के जीवन को आदर्श जीवन के रूप में जीते थे।

उनके विचारों में कहीं अन्तर्विरोध नहीं था उन्होंने एक वक्तव्य में स्पष्ट किया है ''मुझे इस बात की कोई परवाह नहीं कि मेरे विचारों में अन्तर्विरोध दिखाई पड़ता है।'' मैंने सत्य की खोज में बहुत से विचारों को छोड़ दिया और अनेक बातों के बारे में नयी जानकारी हासिल की।

अतः गाँधी जी एक ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने देश के स्वाधीन आंदोलन में भाग लेने के साथ–साथ व्यक्तियों को उनके अधिकार दिलाने में मदद की। चाहे वे किसान अथवा अस्पर्शता अथवा क्रान्तिकारी सभी की सहायता की। सम्पूर्ण राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधने का महान कार्य किया।

अध्याय - २
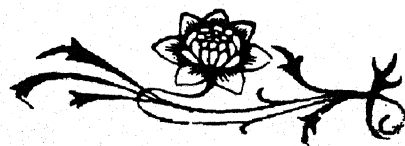
अध्याय - 2

साहित्य का पुनरावलोकन

महात्मा गाँधी जी देश के एक ऐसे महान व्यक्तित्व थे जो स्वयं में अपने आप में एक संस्था थे जिनके विषय में कुछ कहना या लिखना सूरज को दिया दिखाने के समान है। उन्हें उनके कर्मों ने मोहनदास करम चन्द्र गाँधी से महात्मा गाँधी बना दिया वे जिस मार्ग पर चले उस पर कोई बिरला ही चल पाता है। उन्होंने सत्य व अहिंसा का मार्ग अपनाया उसे जीवन के अन्तिम समय तक निर्वहन किया और ऐसा कहते है कि अपनी हत्या करने वाले को भी क्षमा करने को कहा था। महात्मा गाँधी बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी थे अतः उनके विषय में व्यक्ति ने जिस रूप में देखा या जो उनके जिस पक्ष से प्रभावित हुआ उसने उसी विषय पर अपने अनुसार लेखनी चलायी है। उनमें विभिन्न आयाम छिपे थे। अतः जिसने उन्हें राजनीतिज्ञ के रूप में देखा उसने उसी दिशा में लेखनी चलायी जिसने शिक्षाविद् जिसने समाजसेवी के रूप में देखा, जिसने उनहें सतयनिष्ठा सत्यान्वंशी के रूपमें देखा, तदानुसार उसने अपने विचार लिपिबद्ध किये। इसी कारण महात्मा गाँधी पर अनेक पुस्तकें लिखी गयी व अनेक अनुसंधान किये गये जिसका विस्तृत विवरण व लेखा–जोखा रखना अत्यन्त कठिन परन्तु फिर भी अधिकतम् को संग्रहीत करने का प्रयास किया गया है।

गाँधी जी ने स्वयं सत्य के प्रयोग या आत्मकथा के नाम से जो पुस्तक लिखी उसमें उन्होंने अपने जीवन की सभी घटनाओं का साहस

पूर्वक उल्लेख किया है। उन्होंने अपनी कमियों को भी स्पष्ट रूप से उल्लेखित किया है व उन्हें स्वीकार कर दूर करने का प्रयास उल्लिखित किया है जो अत्यन्त साहस व धैर्य का कार्य है। उनके विषय में जिन लोगों ने लेखनी चलायी उनमें मुख्य लोग इस प्रकार है। ऐसे बहुआयामी व्यक्तित्व के विषय में वही लिख सकता है जिसने उसे अत्यन्त पास से देखा हो या उनके विषय में निष्पक्षता से अध्ययन किया हो। मुख्य लेखकों को मैने उद्घृत करने का प्रयास कि‍ा है।

बापू की कारावास की कहानी (आगा खाँ महल में 11 मास) :

इस पुस्तक को महात्मा गाँधी की अत्यन्त नजदीकी डा0 सुशीला नैयर ने लिखा है। उन्होंने अपनी इस पुस्तक में उस घटना व समय का उल्लेख किया है जब वे 1942 में आगा खाँ महल में बापू के साथ नजरबन्द थी इस पुस्तक में बापू के विषय में ऐसी मौलिक सामग्री है जो पहले कहीं प्रकाशित नहीं हुई। भारत के इतिहास में उस समय (1942) का विशेष महत्वहे जब भारत छोड़ो आंदोलन चला। इस पुस्तक में सभी विषयों पर चर्चा है कि किस तरह महादेव भाई देसाई व पूज्य "बा" का निधन हुआ और होने वाली घटनाओं से बापू किस प्रकार प्रभावित हो रहे थे। जेल में जो अनुभव डा0 सुशीला नैयर को हुये, अहिंसा की कसौटी, ईद का त्यौहार, "बा" की बीमारी, दीपावली व अन्य उत्सव इत्यादि पर प्रकाश डाला है। साथ उन विषयों पर भी चर्चा की है कि किस प्रकार बापू पर झूठे आरोप मड़े गये और किस प्रकार बापू जेल से रिहा हुये। इस प्रकार डा0 सुशीला नैयर द्वारा लिखित यह पुस्तक मौलिक व ह्वदयस्पर्शी है जो हमें बापू से साक्षात्कार करा देती है।

महात्मा गाँधी - एक जीवनी :

इस पुस्तक में श्री बी0आर0 नन्दा ने लिखा है। इस पुस्तक में गाँधी जी की जीवनी के विषय में गूढ़तम तत्वों के उल्लिखित किया गया वैसे तो गाँधी जी के विषय में अनेक लोगों ने जीवनियाँ लिखी वे सभी लोकप्रिय हुई परन्तु यह भी एक अमूल्य अनुभवों के आधार पर श्री नन्दा जी का सराहनीय प्रयास है। उन्होंने लिखा है कि जनता उन्हें महात्मा समझती थी, परन्तु उनके राजनैतिक विरोधी उन्हें चतुर राजनीतिज्ञ ही समझते थे। उनके विरोधी यह स्वीकारते थे कि गाँधी जी की मानवता की पूजा धर्म से कहीं अधिक ऊँची है। श्री नन्दा जी ने गाँधी जी की जीवनी लिखने में यह ध्यान रखा है कि उन्हें देव की महिमा से मंडित न करके उन्हें मानव मूल्यों का दृढ़ता से पालन करने वाला महापुरूष के रूप में प्रस्तुत किया है। अपने लेखन में उन्होंने अनेक विषयों पर प्रकाश डाला जैसे– उनकी इंग्लैण्ड यात्रा, बैरिस्टरी असफलता, कानून का सम्मान करना, राजनीति में प्रवेश, धार्मिक जिज्ञासा, सत्याग्रह का प्रथम आंदोलन, दक्षिण अफ्रीका में किये गये प्रयोग, सविनय अवज्ञा आंदोलन, हरिजनो द्वारा भारत छोड़ो आंदोलन व सत्य की खोज जैसे विषयों पर विचार के जीवन का सूक्ष्म मूल्यांकन कर प्रस्तुत किया है।

गाँधी दर्शन :

श्री यशपाल जैन द्वारा सम्पादित व सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन द्वारा प्रकाशित यह पुस्तक गाँधी जी के दर्शन व सिद्धान्त के विषय में अन्य लोग क्या विचार करते थे उस विषय को उद्घृत करती

है। जैसे– आचार्य विनोबा भावे उन्हें एक विरल दर्शन के रूप में देखते थे तो काका कालेलकर उन्हें सर्वधर्म सम्भाव के प्रणेता मानते थे। श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी महात्मा गाँधी जी को मानव कल्याण के संदेशवाहक के रूप में प्रस्तुत करते थे। दादा धर्माधिकारी ने उनके जीवन में सत्याग्रह के महत्व को उजागर किया। सरोजनी नायडू उन्हें दीप शिखर मानती थी। पाण्डुरंग राव उन्हें राम राज्य के प्रणेता मानते थे। पं0 जवाहर लाल नेहरू ने अपने जीवन में जो गाँधी जी से सीखा उस शिक्षा को अमूल्य धरोहर मानते थे इस प्रकार इन महानुभावों ने गाँधी जी के बहुआयामी व्यक्तित्व में एक–एक पक्ष को लेकर इस पुस्तक में वर्णन किया है।

शरीर श्रम और कार्यसाधना :

इस पुस्तक की प्रकाशन भी सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन द्वारा ही किया गया व सम्पादन भी 1श्री यशपाल जैन ने किया। इस पुस्तक में उन्होंने गाँधी जी द्वारा शारीरिक श्रम के महत्व व कार्य साधना के रूप में दिये गये महत्व का विस्तृत वर्णन किया है। गाँधी जी कहा करते थे कि श्रम के द्वारा ही अपनी रोटी कमानी चाहिये अन्यथा श्रम न कर खाने वाला चोर कहलाता है। श्रम के पुरूषार्थ पर ही संसार का अस्तित्व टिका है। बिना श्रम के संसार गतिहीन हो जायेगा व विकास रूक जायेगा व मानव शरीर काहिल होकर आलसी व काम चोर हो जायेगा।

अपरिग्रह व अनाशक्ति :

इस पुस्तक में गाँधी जी के त्याग की भावना को उल्लेखित किया गया है व त्याग के द्वारा समान वितरण प्राकृतिक साधनों का उपयोग मिव्ययीता से करने का वर्णन हो जिससे कई पीढ़ियाँ सुख से रह सकें। साथ ही यह भी उल्लेखित है कि अपरिग्रह व अनाशक्ति से आत्मशान्ति व वास्तविक सुख पाप्त होता है।

गाँधी जी का जीवन प्रभात :

इस पुस्तक को श्री अशोक जी ने लिखा है। इसमें उन्होंने गाँधी जी के जीवन के अनछुये प्रसंगों को उल्लेखित किया व आत्मकथा के कुछ महत्वपूर्ण प्रसंशों को भी उल्लेखित किया जो प्रकाश में नहीं आये थे। उन्होंने गाँधी जी के बाल्याकाल से लेकर स्वतंत्रता आन्दोलन तक का संक्षेप में वर्णन किया है।

स्वदेशी और राष्ट्र चेतना :

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन ने गाँधी जी के स्वदेशी से सम्बन्धित विचारों को इस पुस्तक में संजोया है जिससे देश में स्वाभिमान व राष्ट्रीय चेतना का भाव जाग्रत हो सके क्योंकि देशी वस्तुओं का प्रयोग करने से देश में रोजगार उत्पन्न होगा और राष्ट्रीय स्वाभिमान की जाग्रति आयेगी। इस पुस्तक का सम्पादन यशपाल जैन ने ही किया है।

ब्रह्मचर्य एवं आत्मसंयम :

श्री यशपाल जैन ने ही इस पुस्तक में श्री महात्मा गाँधी के ब्रह्मचर्य के सम्बन्ध में विचारों का उल्लेख किया है व इससे आत्म संयम

की प्राप्ति का मार्ग कैसे प्रशस्त होता है इस सम्बन्ध में गाँधी जी के अनुभव व असलतायें भी इसमें संचित है व आत्मसंयम की प्राप्ति का भी उल्लेख है।

आत्म विश्वास और अभय :

आत्मविश्वास के द्वारा व्यक्ति के जीवन में निर्भयता प्राप्ति होती है जिससे वह जीवन में सफलता की सीढ़ी बढ़ता हैं। परन्तु यह तभी सम्भव है जब वह मानवीय मूल्यों का शक्ति से पालन करे व सतय के मार्ग पर अडिग रहे तभी आत्मविश्वास जाग्रत होता है और जीवन निर्भय होता जाता है ऐसा विचार गाँधी जी ने व्यक्त किये हैं। ऐसे सभी विचारों का समुच्चय इस पुस्तक में संचित है। श्री यशपाल जैन ने ही इस पुस्तक का सम्पादन किया है।

सर्वधर्म सम्भाव :

सभी धर्मों को यदि ईमानदारी से जीवन में उतारा जाये तो हम एक ही सत्य को प्राप्त करते हैं अर्थात् सभी धर्म का सार एक है। वे एक ही सत्य को जो शाश्वत है उसे विभिन्न रूपों में प्रकट करते हैं। अतः गाँधी जी सभी धर्मों के प्रति सम्भाव रखते थे। यही विचार इस पुस्तक में संचित किये गये है। यह पुस्तक भी श्री यशपाल जैन द्वारा सम्पादित है।

अहिंसा और क्षमा :

गाँधी जी ''अहिंसा और परमोधर्मा'' को महत्व देते थे उन्होंने जहाँ तक सम्भव हुआ अपने जीवन में अहिंसा को प्रमुख रूप

से उतारा है व अपने हत्यारों को भी क्षमा कर देने को कहा इस प्रकार के विचारों को जीवन में सभी उतारे ऐसा गाँधी जी ने प्रेरणा दी है व ऐसा करने से समाज में हिंसा व अपराध नियंत्रित हो जायेगा।

- असतेय और आत्मतोष
- सत्य और धर्म
- अस्वाद और रस लालसा
- अस्पृश्यता निवारण
- अहिंसा का अमोघ अस्त्र
- सर्वोदय
- स्वराज्य का अर्थ
- गाँधी जी ने कहा था
- धर्म नीति
- बापू की सीख

जैसी महत्वपूर्ण पुस्तकों का प्रकाशन सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाश्न द्वारा ही किया गया है व सम्पादन मण्डल के मंत्री श्री यशपाल जैन ने ही किया। इन पुस्तकों में उनके नाम के अनुरूप गाँधी जी के विचारों का संचय कर सुन्दर ढ़ंग से प्रस्तुत किया है और उनका जीवन महत्व भी उल्लेखित है। ''सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन'' ने गाँधी के विचाों को जन–जन तक पहुँचाने क लिये अनेक अमूल्य पुस्तकों का प्रकाशन कर उनको उपलब्ध सस्ते मल्यों पर कराया है। कुछ ऐसी पुस्तकें भी प्रकाशित की जिसके लेखक– अन्य लोग थे उनकी दृष्टि में गाँधी जी क्या थे जैसे :–

राष्ट्रपिता :

पं0 जवाहर लाल नेहरू ने इस पुस्तक को लिखा इसमें उन्होनें गाँधी जी के जीवन के उन पक्षों पर प्रकाश डाला जिससे वे राष्ट्रपिता कहलाये। गाँधी जी का श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर से विचार — विमर्श व देश की तात्कालिक स्थिति को उल्लेखित किया व पहली बार जब गाँधी जी गिरफ्तार हुये व हिन्दू–मुस्लिम तनाव पर भी प्रकाश डाला है। इसी प्रकार खादी का प्रचार प्रसार व खादी यात्रा स्वदेशी को प्रमुखता हरिजन उद्यार, जेल में बम विस्फोट जैसी घटनाओं का उल्लेख किया है। इसी प्रकार विश्व में होने वाली घटनाओं का गाँधी जी पर क्या प्रभाव पड़ा उन्होंने भारत छोड़ो आन्दोलन को प्रारम्भ किया इन सभी तत्वों का उल्लेख किया साथ ही उस परस्थिति का जब देश विभाजित हुआ और गाँधी जी की हत्या की गई सभी प्रसंगों का सजीव चित्रण करने में पं0 जवाहार लाल नेहरू सफल रहे हैं।

गाँधी विचार दोहन :

गाँधी जी के विचारों को समग्र रूप से संक्षेप में श्री किशोरवाल मशरूवाला ने इस पुस्तक में उन्होंने सत्य अहिंसा सर्वधर्म सम्भाव को प्रकट किया वहीं अहिंसा व क्षमा के विषय में उनके विचार लिखे हैं तो दैनिक जीवन में उनकी क्रियाओं आत्म संयम, मानवता के प्रति समर्पण भाव व प्रेम का वर्णन अपने देनिक पारिवारिक जीवन की स्थिति अपनी पत्नी "बा" से सम्बन्ध जीवन की सफलता व असफलता का उल्लेख किया तो यह भी उल्लेख किया कि जलियाँवाला बाग जैसी घटना का गाँधी जी के मन पर क्या प्रभाव पड़ा। गाँधी जी के विचार शिक्षा,

व्यवसाय, उद्यम, स्वास्थ्य, प्राकृतिक चिकित्सा इत्यादि पर भी सफलतापूर्वक गाँधी जी के विचार व दर्शन को उकेरा है। साथ ही यह भी बताने का प्रयास किया है कि सूतकात कर गाँधी जी किस प्रकार खादी को प्रोत्साहित करना चाहते थे तो उससे जीवन में संयम व नियमितता को बढ़ावा देते थे और उनका विचार था कि इससे जीवन एक नियम के रूप में चलता है।

गाँधी जी के सिद्धान्त :

(नई पीढ़ी की दृष्टि) श्री खुशवंत शाह ने इस पुस्तक में गाँध ी जी के विषय में दो व्याख्यानों को संग्रहीत कर प्रस्तुत किया है जो विशेष रूप से युवा पीढ़ी की दृष्टि में गाँधी जी के विचार के रूप में प्रस्तुत है। लेखक ने स्पष्ट किया है कि युवा पीढ़ी दिशा भ्रमित है उसकी गाँधी जी के सिद्धान्तों पर पूर्ण निष्ठा नहीं हैं। लेखक स्पष्ट करता है कि नये परिप्रेक्ष्य में यदि गाँधी जी के सिद्धान्तों को ढाल बनाकर यदि आचरण किया जाये तो देश का कायाकल्प किया जा सकता है। परन्तु यहाँ आवश्यकता इस बात की है कि गाँधी जी के सिद्धान्तों को युवा पीढ़ी की मानसिकता को ध्यान में रखकर उन्हीं की भाषा में यदि प्रस्तुत किया जाये तो अपेक्षित परिणाम आ सकते हैं। लेखक गुजरात विश्वविद्यालय सूरत में शिक्षा विभाग के प्रोफेसर रहे हैं उन्होंने अपने सभी अनुभवों को इसमें समेटा है। इस पुस्तक की प्रस्तावना महान गाँधीवादी श्री मुरारजी देसाई ने लिखी इस पुस्तक में गाँधी और नयी पीढ़ी का विवेचन है तो गाँधी जी को मुक्त सत्यान्वेषी भी बताया गया है। दूसरे लेख में उद्बोधनकर्ता ने गाँधी जी से अपने

वैचारिक मतभेद को भी उजागर किया है। यह पुस्तक युवामानस पर सकारात्मक प्रभाव छोड़ने में व गाँधी दर्शन के प्रति आकर्षण उत्पन्न करने में सफल होगी।

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन ने गाँधी जी के समग्र दर्शन को प्रकाशित कर देश पर उपकार किया है जिससे गाँधी आज भी हमारे बीच जीवित ही जान पड़ते हैं।

गाँधी जी के विषय में दो पुस्तकें श्री गोपाल गोडसे ने भी लिखी हैं। ''गाँधी वध और मैं'' व ''गाँधी वहाँ क्यों'' इन पुस्तकों में गाँधी जी के वध के कारण परिस्थितियों का विस्तृत उल्लेख किया गया है। देश की विभाजन से उपजी त्रासदी व हिन्दुओं के साथ हुये अत्याचार व गाँधी जी का मुस्लिम प्रेम व देश विभाजन के बाद पाकिस्तान को 55 करोड़ रूपये भारत सरकार पर दबाव डालकर दिलवा देना व नोवाखाली के दंगे हिन्दुओं का कत्ल व हिन्दुओं की प्रतिक्रिया को गाँधी ने आमरण अनशन करके खत्म कर दिया इस लिये नाथूराम गोडसे उद्वेलित हो उठा और उसने महात्मा गाँधी की हत्या कर दी। इस पुस्तक में नाथूराम गोडसे ने जो पत्र विभिनन लोगों को लिखे उसका भी उल्लेख है।

महात्मा गाँधी पर बनी फिल्म ''गाँधी'' जिसके निर्देशक रिचर्ड एटनबरा है उसे भी देखकर गाँधी जी के विषय में देश–विदेश में अनेक संस्थान स्थापित हैं जो उनके दर्शन का प्रचार–प्रसार करते हैं व उनके विषय में शोध करने वालों को प्रोत्साहित करते हैं। अनेक लेखकों व अनुसंधानकर्ताओं ने गाँधी जी के जीवन के एक–एक पक्ष को लेकर पूरा अनुसंधान कर डाला व अनेक लेखकों ने उनके एक–एक विचार

को लेकर पुस्तक को लेकर पुस्तक की रचना कर डाली। इस प्रकार गाँधी दर्शन एक समृद्ध के समान अनन्त हैं जिसकी गणना करना या एक छोटे से अनुसंधान में समेटना असम्भव है। महात्मा गाँधी अपने आप में एक दर्शन, जीवन शैली, साहित्य का भण्डार, सामाजिक व्यवस्था, मानवता के प्रति समर्पित एक अद्भुत व्यक्तित्व है। ऐसे महापुरूष सदियों में कभी कभार ही जन्म लेते हैं। भारत में जन्म लेने से भारत भी धन्य हो गया, अपने इस सपूत से।

अध्याय - ३
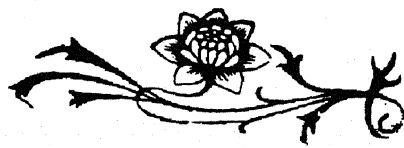
अध्याय - 3

तात्कालिक समय में आर्थिक विचार

तात्कालिक समय में देश एक विषम आर्थिक व राजनीतिक स्थिति से गुजर रहा था, यहाँ के आर्थिक विचारकों के मूल्यवान आर्थिक विचारों का भी कोई मूल्यांकन नहीं था। गोपालकृष्ण गोखले, राना डे, जैसे आर्थिक विचारक भारत में विद्यमान रहे परन्तु उनके विचारों का मूल्यांकन नहीं किया जा सका क्योंकि देश अंग्रेजी की गुलामी के दौर से गुजर रहा था। जो भी आर्थिक नीतियाँ यहाँ लागू की जाती उन पर यूरोपीय विचारकों की स्पष्ट छाप देखने को मिलती थी साथ ही उन आर्थिक नीतियों को अपने स्वार्थ के लिये बनाया व लागू किया जाता था। देश की कृषि पर भी अपनी स्वार्थपरता की छाप अंग्रेजों ने छोड़ी जब उन्होंने किसानों को नील की खेती करने को बाध्य किया। तात्कालिक समय में समृद्ध व पुस्ट आर्थिक विचारों के होते हुये भी वे पंगु बना दिये गयें।

यहाँ के प्राकृतिक स्रोतों का अधिकतम् शोषण किया गया जिसके कारण देश में बेरोजगारी व भुखमरी का दृश्य देखने को मिला। तात्कालीन विचारकों में बाल गंगाधर राव, तिलक, मदन मोहन मालवीय, राजाराम मोन राय व सुभाषचन्द्र बोस जैसे विचारक महत्वपूर्ण थे जो अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते थे। ऐसे विचारक जो आर्थिक क्षेत्र के साथ–साथ सामाजिक सुधार के लिये भी प्रतिबद्ध थे। गाँधी जी वैसे तो कोई आथ्रिक विचारक या अर्थशास्त्री नहीं थे परन्तु उन्होंने जिस

रामराजय की कल्पना की थी उसके विविध आयामों को विस्तारपूर्वक देख कर हम यह स्वीकार करते हैं कि गाँधी जी ने देश के समग्र विकास के लिए जो विचार रखे वे श्रेष्ठ आर्थिक विचार थे।

देश पर पश्चिमी विचार प्रभाव बढ़ता जा रहा था ऐसे में गाँधी जी ने विशुद्ध भारतीय परिवेश, दर्शन से ओतप्रोत विचार रखे वो श्रेष्ठ थे क्योंकि उनके पालन करने से देश में विकास की जो धारा बहती वह स्थायी व सर्वव्यापी होती परन्तु हमारे देश में स्वतंत्रता के पश्चात् उन विचारों को स्वीकार नहीं किया गया।

3A. भारतीय विचार- यूरोपीय सोच का प्रभाव

स्वतंत्रता से पूर्व देश में पश्चिमी विचार का प्रभाव धीरे–धीरे बढ़ने लगा। भारत जेसे कृषि प्रधान देश में जहाँ कृषि मुख्य व्यवसाय के रूप में जाना जाता था वहीं अंग्रेजों के आगमन के पश्चात् देश में यूरोप की औद्योगिक क्रान्ति का प्रभाव भी धीरे–धीरे बढ़ने लगा और यहाँ के सम्पन्न परिवारों पर यूरोपीय विचार अधिक हावी हुये जिसके कारण उन्होंने अपने रहन–सहन का स्तर बोलचाल को भी उसी के अनुरूप ढालने का प्रयास किया।

सर्वप्रथम और सर्वाधिक प्रभाव बंगाल प्रान्त में देखने को मिला जहाँ सम्पन्न व जमींदार परिवारों ने अपनी जीवन शैली को अंग्रेजों के अनुरूप ढालने का प्रयास प्रारम्भ किया जिसके कारण भारतीय परम्परा व विचार धारा को आघात लगा तो वहीं आर्थिक विचार धारा भी प्रभावित हुई। सामान्त व सम्पन्न व जमींदारों ने किसानों, मजदूरों

इत्यादि पर अत्यधिक शोषण व अत्याचार किये जिसके लिये अंग्रेजों का प्रभाव ही उत्तरदायी हैं उन्होंने प्रसन्न करने के लिये आगे से आगे बढ़कर प्रयास किये गये। वैचारिक परिवर्तन का यह प्रभाव धीरे–धीरे देश के अन्य प्रान्तों में भी फैलने लगा जो आर्थिक रूप से मजबूत लोग थे। उन्होंने यूरोपीय विचार धारा को अधिक स्वीकार किया इसी कारण देश के स्वतंत्रता संग्राम में हम पाते हैं कि सम्पन्न लोगों का सहयोग कम ही मिला कयोंकि ऐसे वर्ग के लोग मुख्य रूप से चाटुकारिता करके ऊँचे पद व ''सर'' जैसी उपाधि पाना चाहते थे या अपनी सम्पन्न वैभव व विलासिता पूर्ण जीवन को अक्षुण्य रखना चाहते थे।

गाँधी जी के समय में जहाँ एक ओर लोग अपने देश की स्वतंत्रता के लिये संघर्ष कर रहे थे तो वहीं दूसरी ओर समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग था जो वैचारिक रूप से पश्चिमी प्रभाव में आता जा रहा था जिसके कारण देश का स्वतंत्रता संग्राम अधिक लम्बा खिंच गया।

यदि सत्य कहा जाय तो जवाहर लाल नेहरू व जिन्ना भी अंग्रेजों से प्रभावित थे अपनी जीवन पद्धति को तद्नुरूप बनाने का प्रयास भी किया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इसकी स्पष्ट झलक भी देखने को मिलती है। जब देश की प्रथम पंचवर्षीय योजना बनायी गयी तो उसमें औद्योगीकरण का कार्यक्रम यूरोपीय प्रभाव से ओतप्रोत थी।

तात्कालिक समय में देश के ऊपर यूरोपीय विचार धारा स्पष्ट व गहराई से भारतीय समाज पर अपनी छाप छोड़ने लगी जिस प्रभाव से आजादी के 60 वर्षो बाद भी समाज पूर्णतः मुक्त नहीं है। बल्कि आज उसका प्रभाव और बलवान हो रहा है। हमारी युवा पीढ़ी उसके प्रभाव

में अधिक ग्रसित होती जा रही है।

यदि हम गहराई से और गम्भीरता से देखते हैं तो हम पाते हैं कि एक हजार वर्ष की गुलामी ने हमारे स्वाभिमान को नष्ट कर दिया था हम अपनी सभी योग्य, उत्तम व श्रेष्ठ वस्तुओं पर भी स्वाभिमान नहीं कर पा रहे थे और न ही उसे प्रस्तुत करने में निर्भीकता दिखा पा रहे थे। और पश्चिमी सभ्यता की परिव्यक्त प्रत्येक वस्तु को सम्मान से देखने लगे जो हमारे लिये हमारी संस्कृति के लिये ठीक नहीं थी परन्तु उसे ही श्रेष्ठ मानकर हम अपनाने लगे और पश्चिमी विचार के प्रभाव में धीरे–धीरे आते गये यह कार्य सम्पन्न वर्ग द्वारा अधिक किया गया जो आज भी जारी है। जबकि गरीब व ग्रामीण क्षेत्र के लोग तब भी और आज भी, अपनी संस्कृति से लगाव रखते हैं। समग्र रूप से देखे तो भारतीय विचारधारा पश्चिमी विचार धारा से अत्याधिक प्रभावित हुई जिससे हमारी संस्कृति को आघात लगा है।

3B. भारतीय जीवन पद्धति पर यूरोपीय मिश्रण

तत्कालिक समय में जहाँ भारतीय विचार धारा योरोपीय सोच से प्रभावित हुई वहाँ जीवन पद्धति भी यूरोपीय सोच से प्रभावित हुई। यह स्वाभाविक भी है जब व्यक्ति व समाज किसी विचार या सोच से वैचारिक रूप से अनुकरण भी करने का प्रयत्न भी करता है और तदानुसार अपनी जीवन पद्धति में परिवर्तन लाने का प्रयत्न करता और धीरे–धीरे अपने वैचारिक व पद्धति के धरातल से दूर–दूर का वैचारिक जमीन पर खड़ा पाता है। एक बात और विचारणीय है कि व्यक्ति या

समाज उसी का अनुसरण करता है जिसको वह श्रेश्ठ मानता हे। यूरोपीय विचार धारा व पद्धति के आगे हम स्वाभिमान पूर्वक खड़े नहीं रह सके उन्होंने हमारी पद्धति विचार–धारा को पिछड़ी व खराब साबित करने का कोई अवसर नहीं छोडा जिसके कारण हम अपने श्रेष्ठता खो बैठे और दूसरे की अश्रेष्ठता विचारधारा व जीवन पद्धति में उलझ गये। हमने अंग्रेजों को महाजन या श्रेष्ठ मान लिया और उनका अंधानुकरण करने लगे इस सम्बन्ध में यह उक्ति सर्वथा उचित बैठती है।

''महजनों येवगतः सः पन्थाः''

तदानुसार हमारी जीवन पद्धति भी बदल गयी। बंगाल से लेकर बम्बई तक इसका प्रभाव देखने को मिला तथा उत्तर भारत भी प्रभावित हुई। पश्चिम भारत में इसका प्रभाव कुछ कम पड़ा। भेष–भूषा रहन–सहन सभी को बदलने का अथक प्रयास किया जाने लगा। धोती–कुर्ता की जगह पैन्ट शर्ट ने ले ली व टाई भी गले में बांधी जाने लगी। खान–पान तो कम बदला परन्तु उसका ढंग अवश्य बदला भोजन भूमि पर, पटे पर बैठकर करने की जगह वह मेज कुर्सी इत्यादि में प्रारम्भ हो गया। पैरों में जहाँ कपड़े के चप्पल या जूते हुआ करते थे वहीं चमड़े के विविध चरण परिधान पहने जाने लगे। उच्च घरानों में मदिरा इत्यादि का सेवन भी प्रारम्भ हुआ। क्लब संस्कृति भी इसी प्रभाव व परिवर्तन के परिणाम स्वरूप प्रारम्भ हुई। इसी के साथ क्लब में नृत्य व संगीत के दौरे भी प्रारम्भ हो गये।

ये जो परिवर्तन प्रारम्भ हुये मूलतः वे पहले सामन्त व सम्पन्न परिवारों में प्रारम्भ हुये वे कुछ तो शोक में कुछ अंग्रेजों को प्रसन्न करने के लिये तो कुछ मजबूरी व बाध्यता में भारतीय समाज ने अपनाये। धीरे–

धीरे ये प्रभाव मध्यम श्रेणी के परिवारों में सभायें और कुछ समय में सम्पूर्ण समाज को अपने प्रभाव में ले लिया और भारतीयता का लोप होता चला गया।

आज भी उस प्रभाव से हम बच नहीं पाये है। स्वतंत्रता के एक लम्बे काल खण्ड के बाद भी हम उस गुलामी की मानसिकता में जकड़े हुये हैं। हमारी दीर्घकाल की गुलामी को हटाने का यदि कभी प्रयत्न भी किया गया तो तथाकथित उसे धर्मनिरपेक्षता की आड़ में हटने नहीं देना चाहते।

आज हम जो जीवन पद्धति अपनाये हैं वह स्वतंत्रता के समय से ही अधकचरी या मिश्रित जीवन पद्धति है। अब हमारे समाज के लोग ही यूरोपीय विचारधारा को हमारे समाज में पोषित कर रहे हैं व उसकी श्रेष्ठता को प्रमाणित व श्रेष्ठ बताने से नहीं चूकते और अपनाने में अपने आपको गौरवशाली मानते है। जबकि हम अपनी अज्ञानता के कारण अपनी गौरशाली भारतीय विचारधारा की जड़ों को काट रहे हैं। जबकि यह सत्य है कि भारतीय जीवन पद्धति ही सर्वश्रेष्ठ है। परन्तु आज यह स्वीकार करना पड़ता है कि हमारी जीवन पद्धति यूरोपीय पद्धति का मिश्रण है। देश के कुछ क्षेत्रों में व समाज के एवं बड़े समूह द्वारा आज भी भारतीय संस्कृति का व जीवन पद्धति को ही जीवन में अपनाया जाता है। मुख्यतः देश के दक्षिण क्षेत्र में व ग्रामीण अंचलों में।

अध्याय - ४
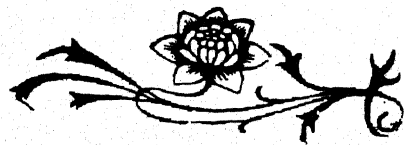
अध्याय - 4

गाँधी जी का अर्थ चिन्तन- रामराज्य की कल्पना

गाँधी जी ने अपने आर्थिक चिन्तन के अन्तर्गत जिस रामराज्य की कल्पना की उसके अन्तर्गत उनका विचार था कि समाज में सभी को काम मिले, श्रम का सम्मान हो तथा ग्रामीण विकास को केन्द्र मानकर अर्थव्यवस्था का संचालन किया जाए तो मूलभूत विकास को प्राप्तम किया जा सकता है। अपने इस रामराज्य के लिए उन्होंने अपरिग्रह का सिद्धान्त व श्रम का सम्मान जैसे महत्वपूर्ण तथ्यों पर जोर दिया है :—

4 A. अपरिग्रह का सिद्धान्त

अपरिग्रह को आस्तेय से सम्बन्धित समझना चाहिए अर्थात में चुराया हुआ न होने पर भी अनावश्यक संग्रह चोरी का सा सामान हो जाता है। परिग्रह का तात्पर्य है संचय या एकत्रित करना। अहिंसक परिग्रह नहीं कर सकता। परमात्मा परिग्रह नहीं करता। वह अपनी आवश्यक वस्तुयें रोज–रोज पैदा करता है। यदि हमारा ईश्वर पर विश्वास है तो हमें समझता चाहिए कि वह हमें हमारी आवश्यक वस्तुयें रोज के रोज देता है।

भक्तों का अनुभव है रोज के काम भर को रोज पैदा करने के ईश्वरीय नियम को हम नहीं जाने अथवा जानते हुए भी पालते नहीं हैं।

इसी कारण जगत में विषमता और उससे होने वाले दुखों को भोगते हैं। यदि सभी लोग अपनी आवश्यकता के बराबर संग्रह करें तो किसी को तंगी न हो। आज जो अभाव दिखाई देता है उसका कारण ही अमीर और अमीर होने के लिए झटपटा रहा है। जबकि इस प्रतिस्पर्धा में गरीब और अधिक गरीब होता जा रहा है। आदर्श अत्याधिक अपरिग्रह तो उसी का कहा जायेगा जो मन से दिगम्बर है। यहाँ तक कि वह पक्षी की भांति बिना घर के, बिना वस्त्र, और बिना अन्न के विचरण करता है। अन्य तो उसे रोज जरूरत भर को भगवान देता है। इस आवद्ध स्थिति को तो बिरले ही पाते हैं। हम सामान्य सत्याग्रह के जिज्ञासु को चाहिये कि आदर्श को ध्यान में रखकर नित्य अपने परिग्रह की जांच करें और जहाँ तक सम्भव हो उसे हटाते रहे। सच्चे सुधा का, सच्ची सभ्यता का लक्षण परिग्रह बढ़ावा नहीं बल्कि विचार और इच्छापूर्वक उसे घटना है।

परिग्रह घटते जाने से सच्चा सुख और सच्चा संतोष बढ़ जाता है। सेवा शक्ति बढ़ जाती है। केवल सत्य की दृष्टि से विचार करें तो शरीर भी परिग्रह है। भोग की इच्छा के कारण हमने शरीर का आवरण ले लिया है और क्षीण हो जाने पर शरीर की आवश्यकता नहीं रह जाती। सर्वव्यापक आत्मा शरीर रूपी पिंजरे में कैसे बन्द रह सकती है। यह पिंजड़ा बनाये रखने को अनर्थ कैसे कर सकता है। दूसरे को कैसे मारा जा सकता है। अपरिग्रह का यह विचार आते ही हम अत्याधिक त्याग को पहुंच जाते हैं और शरीर की नियति पर्यान्त उसका उपयोग केवल सेवार्थ करना सीख जाते हैं। यहाँ तक कि सेवा ही उसकी वास्तविक खुराक हो जाती है। उसका खाना, पीना, सोना, बैठना,

जागना, उँघना सब सेवा के लिए ही होता है। इससे उत्पन्न सुख ही सच्चा सुख है। इस प्रकार बताने वाला मनुष्य सत्य का दर्शन करेगा। इसलिए हम सबको अपनी परिग्रह पर विचार कर लेना चाहिए।

आचार्य विनोबा भावे के अनुसार :

अपरिग्रह का आधार उदारता है। इसलिए मनुष्य को भी आवश्यक संग्रह नहीं करना चाहिए। अर्थात् मैंने अग्रिम रूप से जितने दिनों को संग्रह किया उतने ही लोगों के पेट का अन्न छीन लिया। उतने लोगों को भूखे रखने का पाप मेरे सिर लगेगा। इसलिए कम से कम संग्रह करना, केवल आवश्यकतानुसार ही लेना उपुर्यक्त है। क्योंकि अतिरिक्त संचय करने से मेरी शक्ति पर तनाव पड़ेगा जिससे मेरे ओज की हानि होगी। और मैं चिन्ताग्रस्त हो जाऊँगा। अपुति सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का ह्रास होगा। इसलिए कम से कम से केवल शरीर निर्वाह के लिए ही संग्रह करना। अनावश्यक का तो बिलकुल संग्रह नहीं करना।

अपना जीवन सादा बनाने का प्रयत्न करना। अपरिग्रह की दशा और दिशा सत्य और अहिंसा ही है। अहिंसा का व्रत भी सत्य के जैसा ही है। व्यापक और स्वभाविक ही है। अन्तर केवल इतना ही है। अहिंसा का पालन क्रमशः बढ़ता जाता है। व्यक्ति के जीवन में अहिंसा का आंकलन और पालन क्रमशः होता है। समाज के लिये भी यही नियम है। सभी सामाजिक प्राणियों को अहिंसा की अनुभूति बहुत ही धीमी गति से होती है। क्योंकि सूक्ष्म या स्थूल रूप से कहीं न कहीं हिंसा का सहारा लेना पड़ता है। हिंसा की मात्रा यदि कम करते जाये

तो अहिंसा धीरे–धीरे बढ़ते जायेगी जिससे शान्ति एवं सन्तुष्टि प्रात होगी। इसी प्रकार परिग्रह और अपरिग्रह की स्थिति है। अपरिग्रह का पूर्णता पालन कठिन है। इसलिए परिग्रह की मात्रा को दिन प्रतिदिन घटाने से अनाशक्ति का भाव पुष्ट होता है। परिग्रह से तात्पर्य सम्पूर्ण शक्ति से चौतरफा कब्जा करना।

असंग्रह का मार्ग संयम का मार्ग है। असंग्रह व्रत साधने के लिये संयम का अभ्यास करना होगा। जिससे संतोष लाभ तो होता ही है साथ में उससे चिन्तन में समाधान मिलता है। संयम के जीवन में सदैव समाधान मिलता है। इस तरह असंग्रह से उत्तरोत्तर संयम संतोष स्वास्थ और समाधान व्यक्ति और समाज में प्रतिस्थापित होता है। अतः यह स्पष्ट होता है कि सभ्यता का दर्शन परिग्रह न होकर अपरिग्रह है। यह अपरिग्रह या असंग्रह स्थूल जीवन में जितना आवश्यक होता है उतना ही अधिक सूक्ष्म दृष्टि से आवश्यक होता है (उतना ही अधिक सूक्ष्म दृष्टि से आवश्यक है)। मन बुद्धि और विचारों पर भी असंग्रह व्रत लागू होना चाहिए। इसलिए ज्ञान संचय में भी अपरिग्रह का अभ्यास होना चाहिए। यह सूक्ष्म अपरिग्रह व्रत का पालन है। वस्तुओं के संग्रह में जीवन में जैसे असन्तुलन पैदा होता है। यह असन्तुलन सामाजिक जीवन में असमानता और राग–द्वेष को उत्पन्न करता है। इसी प्रकार व्यर्थ का ज्ञान मन बुद्धि पर बोझ उत्पन्न करता है। यह सूक्ष्म संग्रह की वृत्ति है। विवेकहीन ज्ञान संचय से जीवन विकास में वासत्य की खोज में कोई लाभ नहीं होता।

यावत जीवेत, सुखम् जीवेत।

ऋणम् कृत्वा घृत्तम पिवत।।

चार वाक्य के इस दर्शन से गाँधी जी बिलकुल सहमत नहीं थे। उनके अनुसार जीवन की आवश्यकताओं को अपरिग्रह के द्वारा शनैः—शनैः न्यूनतम करते जाने से व्यक्ति को जीवन का वास्तविक आनन्द प्राप्त होने लगता है और वह ऐसी आवश्यकता विहीनता की स्थिति में पहुँचता है जहाँ वह गीता के इस श्लोक को चरितार्थ करता है।

''सुख दुखे समे कृत्वा, लाभ लाभाऊ, जया जययु।''

इस प्रकार गाँधी जी का मत है कि अपरिग्रह के द्वारा मनुष्य अपने जीवन के लक्ष्य को पा सकता है।

4 B. श्रम का सम्मान

गाँधी जी मनुष्य को सर्वोपरि माना है उनके अनुसार सामाजिक व्यवस्था में मनुष्य कभी भी मशीनों के द्वारा नहीं हो सकता। मशीनें कभी भी मनुष्य से अधिक मूल्यवान नहीं हो सकती। क्योंकि मनुष्य चेतनशील प्राणी है। उसमें ईश्वर स्वरूप आत्मा विराजमान है और सभी ने मशीने निर्जीव हो पाश्चात्य सभ्यता, भौतिक कल्याण पर अधिक ध्यान केन्द्रित करती हैं परन्तु गाँधी जी का विचार था कि मनुष्य दुःखी इसलिए नहीं है क्योंकि वह सम्पन्न है बल्कि उनकी अप्रसन्नता का कारण गरीबी भी नहीं है इन सब दुखों का कारण बढ़ती हुई आवश्यकतायें हैं जिनका नियंत्रण आवश्यक है। यदि देश का समग्र विकास व श्रम व श्रमिक को सम्मान देना है तो यह आवश्यक है श्रम प्रधान कार्यों को प्रोत्साहित किया जाये साथ ही व्यक्ति का सम्मान उसके आर्थिक वैभव

या विपन्नता को देखकर न हो बल्कि उसकी कार्य क्षमता कार्य कुशलता के आधार पर होना चाहिए इससे समाज में एक ओर जहां श्रम करने वालों को प्रोत्साहन मिलेगा वहीं दूसरी ओर समाज में ऊँच–नीच का भाव मिट जायेगा।

श्रम चाहे छोटा हो या बड़ा शारीरिक से या बौद्धिक वह सम्मान पाने योग्य है क्योंकि विश्व में जो भी रचनात्मक या सृजनात्मक विकास दिखायी दे रहा है वह श्रम के कारण ही दिखायी दे रहा है। गाँधी जी ने अपने आश्रम में छोटे से छोटे व बड़े से बड़े काम को स्वयं करके आदर्श प्रस्तुत किया। चाहे वह शौचालय की सफाई का कार्य हो या सूत कातने का अथवा प्रार्थना की व्यवस्था का। गाँधी जी ने यह आदर्श प्रस्तुत किया कि व्यक्ति को अपनी आवश्यकताओं के अनुसार कम से कम सभी कार्य अवश्य सम्पादित करना चाहिए।

श्रम का सम्मान :

शारीरिक श्रम का अर्थ है। शरीर के द्वारा किया जाने वाले उत्पादक श्रम। यह सबके लिये अनिवार्य है इसे टाला नहीं जा सकता इसे स्वकर्म या स्वधर्म भी कहा जा सकता है। श्रम के विषय को एक उदाहरण के माध्यम से समझा जा सका है।

"एक साधु ने उनका अपना एक छोटा सा आश्रम था थोड़े से शिष्य थे। सब ज्ञान की उपासना में लीन रहते थे। एक बार बहुत दिनों तक वर्षा नहीं हुई। पानी के अभाव में आश्रम के पेड़ पौधे सूख गये आश्रम उजड़ गया एक प्रकार से खण्डहर जैसा हो गया।

साधु ने यह देखा तो उन्हें बड़ा क्लेश हुआ उन्होंने सोचा क्या करें? आश्रम से कुछ दूरी पर पानी का एक तालाब था। उस तालाब में थोड़ा पानी बचा था। साधु ने निश्चय किया कि उस तालाब से पानी लेकर आश्रम के पेड़ पौधों को सीचेंगे। उन्होनें शिष्यों से कहा तो उन्होंने उस घोर गर्मी में इतनी दूर जाकर पानी लाने से हिचकिचाहट दिखाई पर साधु अपने संकल्प पर अडिग थे। उन्होंने शिष्यों की परवाह नहीं की। एक कलश उठाया और तालाब की ओर चल दिये। शिष्यों ने यह देखा तो वे भी कलश लेकर उनके साथ हो गये।

मारे गर्मी के उनके शरीर से पसीना बहकर धरती पर गिर रहा था, पर उन्होंने उसकी चिन्ता नहीं की। तालाब से कलशों में पानी ला–लाकर आश्रम की प्यासी धरती की क्षुधा तृप्त करते रहे। उनका यह क्रम चलता रहा। कुछ ही समय में उनके परिश्रम से आश्रम का रूप बदल गया, हरियाली फिर लहलहाने लगी। लेकिन यह क्या? जिस रास्ते से वे अपना पसीना बहाते तालाब पर जाते थे उस पर भी हरे–हरे पौधे मुस्कराने लगे। शिष्यों को बड़ा आश्चर्य हुआ। तब साधु ने उन्हे समझाया,'' इसमें अचरज की कोई बात नहीं है। यह पसीने का करिश्मा है। तुमने यह सुना नहीं है, जहाँ पसीने की बूँदे गिरती हैं, वहाँ कीमती मोती उगते हैं। (स्रोत – शरीर श्रम और कार्य साधना पेज–22)

शिक्षा में उद्योग का स्थान अवश्य होना चाहिए जिससे शारीरिक श्रम के महत्व को विद्यार्थियों को समझाया जा सके परन्तु उस दिशा में आगे कैसे बढ़ा जाये इसके लिए कोई स्पष्ट नीति या मार्ग निश्चित नहीं किया जा सका। शारीरिक श्रम प्रत्येक मनुष्य के लिए अनिवार्य होना चाहिए इस तथ्य को हॉलस्टाय ने अपने निबन्ध में

उल्लेखित किया। शारीरिक श्रम अंग्रेजी शब्द ब्रेडलेवर का अनुवाद है अर्थात् रोटी के लिए श्रम पेट भरने के लिए श्रम करना प्रत्येक व्यक्ति का मजदूरी करना और हाथ पैर हिलाना ईश्वरीय नियम है। इस तथ्य को भगवत गीता के तीसरे अध्याय में प्रमाणित किया गया। यज्ञ किये बिना भोजन करने वाला चोरी का अन्न खाता है। यहाँ कठिन श्राप अयज्ञ के लिए हो अर्थात् श्रम करके ही रोटी उपसर्जित करना शोभा देता है। बुद्धि भी इस वस्तु की ओर हमें ले जाती है। मजदूरी न करने वाले को खाने का क्या अधिकार है।

यदि आर्थिक रूप से सम्पन्न व्यक्ति भी श्रम न करे तो वह अपनी सम्पन्नता को खो बैठेगा।

अब प्रश्न यह उठता है कि यदि अमीर और गरीब सभी को शारीरिक श्रम करना है तो सभी रोटी कमाने की कसरत क्यों न करें। मानसिक और बौद्धिक श्रम को शारीरिक श्रम के ऊपर श्रेष्ठ न माना जाये और उसे अधिक पारिश्रमिक भी न दिया जाये। जिससे आर्थिक विषमता भी दूर होती है और दोनों को समान प्रतिष्ठा भी प्राप्त होती है। शारीरिक श्रम से बचकर लोग व्यायाम के लिए परिश्रम करना अच्छा समझते हैं। साथ ही कुछ प्रोजेक्ट तैयार करके ज्ञान प्राप्ति के लिए बौद्धिक श्रम करना अच्छा मानते हैं। निःसन्देह यह अच्छा श्रम है। परन्तु इसे ''ब्रेडलेसर'' नहीं कहा जा सकता है। श्रम के महत्व को प्रोत्साहित करने के लिए यह आवश्यक है कि नयी शिक्षा पद्धति में श्रम को शिक्षा से जोड़ा जाये और विद्यार्थियों को इस ओर आकर्षित करने के लिए श्रम को इस पूर्ण या रूचिकर बनाया चाहिए। दैनिक जीवन में श्रम का विशेष स्थान होना चाहिए। गाँधी जी का ऐसा मत था कि जहाँ कृष्ण

जी की जय जयकार की जाती है वहीं 90 प्रतिशत लोगों को गीता का ज्ञान नहीं है।

स्वयं श्रीकृष्ण को शारीरिक श्रम से अत्यन्त प्रेम था। वे गाय चराने, गोबर उाने का काम बड़े सम्पूर्ण ढंग से करते थे। आज लोग श्रीकृष्ण को याद करते हैं परन्तु उनके शारीरिक श्रम की ओर ध्यान नहीं देना चाहिते। वास्तव में रम की स्वयं इतनी महत्ता है कि उसे कोई प्रतिष्ठित करे इसकी आवश्यकता नहीं है बल्कि श्रम ने स्वयं उन्हें प्रतिष्ठित कर दिया है। कृष्ण को गोपाल की उपाधि गौ पालन के कारण ही मिली। गाँधी जी के आश्रम में भी सूत कताई के लिये आधा घण्टा अनिवार्य माना गया जिससे शारीरिक श्रम किया जा सके और उपासना विविध रूपों में की जा सकती है। किसान खेत में काम करता है। दूसरा व्यक्ति अन्य प्रकार का शारीरिक श्रम करता है आवश्यकता एवं भौगोलिक परिस्थिति के अनुसार श्रम अलग–अलग प्रकार का हो सकता है। परन्तु सामाजिक योगक्षेम के लिए उत्पादक श्रम आवश्यक है और साधना के लिए भी आवश्यक है। यदि दार्शनिक दृष्टि से इसकी व्याख्या करें तो शारीरिक श्रम का तात्पर्य है। सृष्टि के साथ एक रूप होना श्रम की वांगमय प्रतिष्ठा कोई उपयोग की नहीं है। श्रमकों को अधिक मजदूरी देना उसकी वास्तविक प्रतिष्ठा को बढ़ाना है तभी श्रम की श्रेष्ठता प्रमाणित होगी। उसे सरस बनाया जा सकता है।

यह कार्य हम सभी को मिलकर करना है तभी शारीरिक श्रम और बौद्धिक श्रम समान प्रतिष्ठा को प्राप्त होंगे। और शारीरिक श्रम की स्वीकार्यता बढ़ेगी। पांडुरंगा राव का विचार है काम ही जीवन का सत्य

है जो श्रमजीवी है। वह आत्म निर्मर हो सकता है और अपने परिवार, समाज और राष्ट्र को आत्मनिर्भर बना सकता है। इसके विपरीत आलसी जो दूसरों के श्रम पर निर्भर रहता है वह अर्कमण्डय तो है ही साथ ही भगवान ने हमें जो सुन्दर और बलिष्ट शरीर दिया है उसका पूरा—पूरा उपयोग करने में वह असफल हो रहा है और अपनी आत्म शक्ति को निरउपयोगी बनाकर जन्मदाता ईश्वर के प्रति घोर अपराध कर रहा है।''

एकांक योगी का स्वप्न तभी साकार बनेगा जब जीवन को श्रम सम्पन्न बनाकर उसी श्रम देवता की आराधना को परब्रह्मा की आराधना समझ सके। श्रम ही जीवन का सर्वश्रेष्ठ आश्रम है बाकी सब भ्रम है। जो कि हमे ब्रह्म से दूर ले जाता है। सत्यमेव जयते का आदर्श वाक्य तभी चरितार्थ होता है जब श्रम एवं जयते का सार समझा जा सके।

कहा जाता है कि हमें अपने चरित्र का विकास करना चाहिए क्योंकि चरित्र जीवन जीने की आधारशिला है और इसके लिए आवश्यक है मर्यादापूर्वक जीवन जीना और इसके साथ ही साथ आवश्यक है शरीर को स्वस्थ रखना। शरीर स्वस्थ रखना अर्थात् अपने भोग क्षमता को स्वस्थ बनाये रखना जहाँ हमें चरित्रय के विकास की प्रेरणा मिलती है। वहीं दूसरे प्रेरणा भोग क्षमता को सौ सालों तक कायम तथा स्वस्थ रखना भी है। इसलिए उपभोग ऐसा होना चाहिए जिससे भोग शक्ति कमजोर या क्षतिग्रस्त न हो अर्थात् क्षीण न हो। भोग क्षमता एक सीमा तक होना चाहिए। इससे आशय है कि उपभोग ऐसा होना चाहिए जिससे भेग या उपभोग शक्ति क्षीण न हो इसके लिए आवश्यक भोजन

उत्तम होना चाहिए तथा ऐसा होना चाहिए जिससे हाजमा कमजोर न हो और उत्तम भोजन वही है जिसे शरीर अच्छी तरह से हजम कर सके। वैसे भी कहा भी जाता है बिना संयम के शरीर को धारण नहीं किया जा सकता। गीता में भी इस बात की पष्टि की गयी है–

"युक्ताहार बिहारस्य युक्तचेष्टल्य कर्मसु।
युक्तस्वपवबोधस्य योगो भवति दुःखहा"।

गीता के अनुसार आहार विहार युक्त होना चाहिए। युक्त से तात्पर्य मर्यादित एवं संन्तुलित से है। अन्य कर्म और प्रयास, चाहे वो व्यापार हो अथवा कोई अन्य कार्य मर्यादित होना चाहिए। चाहे प्रातःकाल में जागरण हो या रात्रि में सोना जो इस प्रकार से संयमित जीवन जीता है। वह पुरूष अथवा उस पुरूष के लिए योग दुःखहा माने सुख का हरण करने वाला होता है। इस प्रकार का संयमित जीवन मन स्वास्थ्य ओर शरीर के लिए आवश्यक है इस बात को ट्रस्टीशिप में अवश्य छोड़नी चाहिए जिससे मर्यादा के महत्व को और अधिक स्पष्ट किया जा सके।

इसके साथ ही अस्तेय का दूसरा पहल अर्थात् अपरिग्रह जीवन के नियमन की परिणीत कह लीजिये या फिर कह सकते हैं यह जीवन में संयम की मर्यादित सीमा को दर्शाता है। अपरिग्रह का मुख्य कार्य संयम–शिक्षा है। जब व्यक्ति में परिग्रह की क्षमता प्रबल होती है तो व्यक्ति को परावलम्बी होना पड़ता है और व्यक्ति के लिए इस प्रकार की पराजय श्रेष्ठकर नहीं है यह पराजय न व्यक्ति के लिए हित कर है और न समाज के लिए है। व्यक्ति को इस प्रकार के भ्रमित स्वप्न को अपने मन से निकाल देना चाहिए कि परिग्रह से सुध की प्राप्ति

होती है। यदि जीवन का रास्ता पहले से निर्धारित है तो उस पर चलना आसान है। जीवन के मार्ग में परेशानियाँ भी कम आयेगी। व्यक्ति यदि संयमित जीवन और सेवा व्रत धारण करे तो ब्रह्मचर्य का पालन करने में किसी भी प्रकार की कोई कठिनाई नहीं आयेगी और समाज में व्याप्त विषमताओं का काफी हद तक समाधान हो जायेगा। और समाज में सभी के मन में स्वस्थ वृत्ति निर्मित होगी। इससे समाज स्वस्थ और सुरक्षित होगा। आज समाज में व्याप्त लोभवृत्ति और भोगवृत्ति जैसी समस्यायें धीरे–धीरे समाप्त होती चली जायेंगी और एक संयमित और सन्तुलित जीवन के विकास का क्रमिक विकास प्रारम्भ हो जायेगा।

जब वस्तु आवश्यकता से अधिक हो जाय तो उस वस्तु का मूल्य घट जाता है। और ऐसा केवल वस्तु की अधिकता के कारण ही नहीं बल्कि किसी व्यक्ति के पास अधिक धन एकत्रित हो जाए तो वह उसकी कद्र करना कम कर देता है। और उसका उपयोग बहुत ही लापरवाही से करने लगता है। उसे अपने आप पर संयम नहीं रहता। और अपरिग्रह हमें संयम की शिक्षा देता है। और समाज में जिसके पास धन है वो कभी यह नहीं सोचते कि वह वस्तु का संग्रह कम से कम करे। ठीक ढंग से सम्भलकर उसका उपयोग करें। इससे वस्तु धन और समय तीनों की ही बर्बादी होती हैं यदि वे संयम का वास्तविक अर्थ जान ले और समय, शक्ति और बृद्धि सद्उपयोग करना प्रारम्भ कर दे तो बर्बादी से बचा जा सकता है। किसी भी चीज की अति बुरी होती है अर्थात् एक ओर तो धन की अधिकता व्यक्ति को लापरवाह बनाती है तो दूसरी ओर धन का अभाव व्यक्ति के जीवन को दुष्कर बनाता है। चिन्ताओं को बढ़ाता है कि अगले दिन का भोजन कैसे जुटाया

जाय। अत्यधिक परिश्रम करने पर भी उन्हें अपनी आवश्यकतार्थ वस्तु उपलब्ध नहीं हो पाती और व्यक्ति के जीवन में धन के आभाव का प्रभाव ताउम्र दिखायी पड़ता है और उनके धर में हमेशा हाय–हाय मची रहती है। सभी सदैव चिन्ताग्रस्त रहते हैं।

वास्तविकता में अपरिग्रह व्रत जिस प्रकार बाहरी वस्तुओं और सेवाओं पर लागू होता है उसी प्रकार से व्यक्ति के बौद्धिक विचारों पर भी लागू होता है। इसलिए कहा जाता है कि ज्ञान और संचय सम्बन्धि विचारों में भी अपरिग्रह की वृत्ति को स्थान देना चाहिए। ज्ञान का क्या अर्थ है ज्ञान का अर्थ केवल किसी विषय की जानकारी तक सीमित नहीं रहता बल्कि ज्ञान वह है जिससे सारे समूह को सच्चा सुख और शान्ति प्राप्त हो। वही ज्ञान है और उसी ज्ञान को धारण भी करना चाहिए या प्रयास करना चाहिए। बिना किसी उद्देश्य के और बिना किसी लक्ष्य के ज्ञान प्राप्ति कहाँ और निरर्थक ज्ञान का संचय करना महत्त एक बेवकूफी सिद्ध होती है। इससे जीवन के विकास में सत्यशोधन में किसी भी प्रकार का कोई भी लाभ प्राप्त नहीं होता इसलिए आचार–विचार में भी अपरिग्रह की वृद्धि समायोजित करनी चाहिए। व्यक्ति को चाहे जिस शास्त्र और चाहे जिस किसी महापुरूष पर श्रद्धा हो उसे उनके विचारों से पूर्ण अवगत होना चाहिए उन्हें उनके विचारों का परा अच्छी तरह से अध्ययन करना चाहिए। यदि व्यक्ति की श्रृद्धा और विचार सुदृढ़ है तो ही वह किसी दूसरे विचारों से तुलनात्मक अध्ययन कर सकता है। और तभी विचार संशोधन, विचार मंथन, विचार विकास सम्भव है। अन्यथा सब बुद्धि विभ्रम सिद्ध होगा।

इसी कारण से कहा भी जाता है कि उन्हीं विचारों को ग्रहण करना चाहिए जो ईश्वर के मुख से निकले हो अर्थात् जो ईश्वर का साक्षात्कार कराने में, मोक्ष प्राप्त कराने में सहायक हो उन्हीं को ग्रहण करना चाहिए और इसके विपरीत विचारों को त्याग देना चाहिए। ''गाँधी जी का भी कथन है कि ''चौबीस कलाक चैतन्यनो डर राखीए। रखेए दुभाय।''

अर्थात् -

चौबीसों घण्टे हम चैतन्य का यानी ईश्वर का और हम अपने आचरण में ऐसा कोई भी कार्य सम्मिलित न करें जिससे ईश्वर हमसे नाराज हो जाए तो हमारा कल्याण निश्चित है।

लेकिन अधिकतर हम ईश्वरीय चरणों से दूर ही रहते हैं। यानी धन लोभ आदि में विलुप्त रहते हैं। इन्द्रियों के वंश रहते हैं। गाँधी जी तो यह भी कहते हैं कि ईश्वर हमारा साक्षी है। और वो निरंतर हमारा निरीक्षण करता है। ऐसा प्रेरणा देता है यदि हम ईश्वरीय प्रेरणा से चलने का निश्चय करें तो समझ लेना चाहिए कि हम ईश्वरीय शरण की ओर चल पड़े हैं। ईश्वर ने व्यक्ति को विवेक और बुद्धि प्रदान किया है। जिसका अध्ययन कर अपने विवेक और बुद्धि को जाग्रत किया जा सता है। ईश्वर की निकटता ही सारे समाज को असंग्रह के मार्ग पर ले जायेगी और यही असंग्रह व्रत का सार है। यानी असंग्रह व्रत को धारण करने से हम ईश्वर के और अधिक निकट जा सकेंके। इस महाव्रत के पालन से हमें शान्ति का अनुभव होगा क्योंकि इस व्रत के पालन में हम अखण्ड ईश्वरभिमुख रहेंगे।

किसी भी व्रत को लेकर थोड़े समय के लिए धारण करना और फिर उसे त्याग देना नहीं होता बल्कि उसका पालन निरन्तर मृत्यु पर्यन्त करना चाहिए और यह स्वभाविक भी है। इसी प्रकार असंग्रह व्रत का पालन भी सतत् करते रहना चाहिए। असंग्रह अर्थात् पांच व्रत इन पांचों व्रतों का अखण्ड पालन करते हुए परमात्मा में लीन हो जाना जिससे कि हमारा परमात्मा से भिन्न कोई दूसरा स्वरूप न हो। स्वयं नगण्रू बनकर जीवन की बागडोर ईश्वर के हाथ में सौंपकर अपने जीवन की सारी वृत्तियों को समाप्त कर लें यही जीवन का अंतिम लक्ष्य है।

अपरिग्रह एक सामाजिक धर्म है इस संदर्भ में भगवान महावीर से उत्पन्न (सूत) तथा ग्रंथ रूप में गणधर के द्वारा कृत सूर्यगाड़ो नामक आगम के प्रथम अध्ययन के प्रथम सूत्र में जंबु ने आर्य सुधर्मा से पूछा, ''भगवान महावीर की वाणी में बन्धन'' क्या है। और उसे कैसे तोड़ा जा जा सकता है? तब इन दोनों प्रश्नों के उत्तर में आर्य सुधर्मा ने कहा 'अपरिग्रह बन्धन है, हिंसा बन्धन से सुधर्मा ने कहा –

''चित्तमतमचितं या परिगिज्स किसामपि।
आरणां वा अणुजाणई एवं दुक्खाणा मुच्चई।।

(अपरिग्रह और अनाशक्ति पेज नं0 30)

अर्थात् जो व्यक्ति चेतन या अचेतन किसी भी प्रकार के पदार्थ में थोड़ा सा भी लोभ रखता है। साथ ही दूसरों के परिग्रह का अनुमोदन करता हो वह कभी भी सुखी नहीं हो सकता अर्थात दुःख से छुटकारा नहीं पा सकता। परिग्रह बन्धन है और बन्धन का कारण है ममत्व।

भगवान उमास्वामी ने भी अपने तत्वार्थ–सूत्र में परिग्रह का स्वरूप मूर्च्छा यानि आशक्ति ही कहा है – मूर्च्छा परिग्रहः।

मूर्च्छा परिग्रहः अर्थात किसी भी वस्तु पर अपनी मालिकी समझना मूर्च्छा कहलाता है। लोभ में आकर किसी भी वस्तु का अधिक से अधिक अर्जन करने में ही अपना सुख समझने लगते हैं और उसके वियोग में अपने आपको दुखी मानते हैं। वर्तमान समय में तो लोभ में फंसकर व्यक्ति अपने ही अपनों को क्षति पहुँचाने लगता है। आज बड़े–बडे राष्ट्र अपने–अपने देशवासियों को सुविधायें प्रदान करने के लिए आपस में भिड़ गये है। एक तरफ तो हम समानता की बात करते हैं। एकीकरण की बात करते हैं तो वहीं दूसरी ओर अपने जीवन में अधिक से अधिक लाभ और उपभोग करने को महत्वपूर्ण मानते हैं। और लोभ और लालचवश अधिक से अधिक अर्जन स्वामी जी ने वस्तु आदि स्थूल पदार्थों पर मूर्च्छा असक्ति रखने पर गदा प्रहार करते हुए उसे परिग्रह कहा है जो पूरी तरह से संयमी साधु भी होगा वह भी न्यूनतम परिग्रह वस्त्र, पात्र आदि का चाहे वह शास्त्र के अनुसार हो या फिर उसकी स्वयं की इच्छा से हो करता ही है। वैसा देखा जाए तो पूरी तरह से अपरिग्रह को जीवधारी के लिए अपनाना कठिन ही नहीं असंभव सा ही है। यानि जीवन भी एक प्रकार से परिग्रह ही तो है।

इसी कारण से कहा जाता है कि ममता रहित आसक्ति होना ही अपरिग्रह का आधार है। किसी भी प्रकार से सूक्ष्म से सूक्ष्म संग्रह भी लोभ ही है। जैसे जब भंवरा पुष्पों से रसपान करता है तो वह पुष्पों को किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं देता और अपने आपको तृप्त भी कर लेता है। देखा जाए तो वास्तविकता अपरिग्राही का होना चाहिए।

(तत्पवार्थ सूत्र 7.29) से संतोष से ही लोभ को जीतने का आदेश है। अर्थात् व्यक्ति का आत्मा संयम ही उसे उसके लाभ और वृत्ति पर विजय दिलाता है। अपरिग्रह संयम वास्तविकता में व्यक्ति के मस्तिष्क से मेरा जैसे शब्दों को विकारों को समाप्त करने का माध्यम है। परिग्रह की उत्पत्ति के आधार पर भी अध्ययन के तो इसके स्पष्ट उदाहरण प्राप्त होते हैं जैसे – परि+ग्रह ग्रघृ धातु में परि उपसर्ग और अप प्रत्यय जोड़ने से अर्थ में परिवर्तन होकर ''पकड़'' गिरफ्त लिप्तता में परिवर्तित हो जाता है। इसीलिए परिग्रह दो प्रकार के होते हैं वाह्य भी और अभ्यन्तर भी। जिस प्रकार बिना बीज के वृक्ष नहीं उगते ठीक उसी प्रकार आसक्ति के बिना परिग्रह सम्भव नहीं हो सकता।

आपसी मतभेद, एक दूसरे का बुरा सोचने और मन में विकारों के उत्पन्न होने का मुख्य कारण भोग बुद्धि का होना है। जिस प्रकार से लाभ में वृद्धि होती है उसी प्रकार व्यक्ति में लाभ कमाने और लालच की वृत्ति का भी विकास होता जाता है– ''जहाँ लाहो तहा लोहो, लाहा लाहने पवड्ढई।'' मनुष्य की उम्र बढ़ती जाती है लेकिन उसकी तृष्णा मन से कभी पूर्ण रूप से समाप्त नहीं होती बल्कि उसके अन्दर और पाने की चाह और अधिक प्रबल होती जाती है।

अर्थात् तृष्णा का तरुणायते।'' अर्थात् तृष्णा तो तरुण ही रहती है। कबीर दास जी ने कहा है–

''माया मरी न मन मरा मरि मरि गया शरीर''

इसीलिए गाँधी जी ने इन सबसे हटके ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त प्रतिपादित किया था, जिसमें साम्यवाद और पूँजीवाद दोनों से ही हटके नया तीसरा मार्ग मानव जीवन–दर्शन से सम्बन्धित विषय को सम्मिलित

करते हुये जीवनदर्शन के पहलुओं को दर्शाया है। ट्रस्टीशिप सिद्धान्त के अनुसार मानव का जीवन दर्शन होगा– "तेन त्यक्तेन भुजीथाः" अर्थात् पहले त्याग कर भोग। इस सृष्टि में सब कुछ भगवान का है। "ईशावास्यमिंद सर्वम्" तो फिर व्यक्ति की व्यक्तिगत मालकियत तो ईश्वर द्रोह है। अर्थात् किसी ईश्वरीय वस्तु पर व्यक्ति अपना स्वाभाविक कैसे सिद्ध कर सकता हैं।

गाँधी जी के अनुसार – गाँधी जी ने ट्रस्टीशिप में कहा हम सम्पत्ति के मालिक हैं, उसके सेवक या ट्रस्टी है। "सम्पत्ति सब रघुपति के आही।" केवल जमीन जायदाद का ही नहीं बल्कि विद्या, कीर्ति सत्ता यानि हर चीज के परिग्रह से हानि होती है। विद्या के विषय में भी कहा गया है कि हे भारती। तुम्हारा यह कोष अपूर्व हैं जिसका व्यय करने से बढ़ता है और अति संयम करने से उसका क्षय होता है।"

अपूर्व कोऽपि कोशोऽयं विद्यते तब भारति।
व्यतो वृद्धिमयाति, क्षयमायाति संचयात्।।

अपरिग्रह साधना से सुख शान्ति और धर्म की सिद्धि होती है। इसलिए जहाँ धर्म हो वहीं शान्ति है और जहाँ शान्ति है वहीं सुख है। उत्तराध्ययन में कहा गया है कि धर्म वहीं टिकता है जहाँ सरलता होती है। इसमें वास्तविकता में सद्गुणों की वृद्धि होती है। सच्ची स्वाधीनता की प्राप्ति होती है। तथा अभय संतोष और प्राणीमात्र से मैत्री भाव मिलता है।

अब यह स्पष्ट होना आवश्यक है कि निर्धनता और अपरिग्रह में अन्तर है। कई व्यक्ति अपरिग्रह और निर्धनता में भेद स्पष्ट नहीं कर पाते– निर्धन किसे कहेंगे क्या जो वस्तुओं और सेवाओं का संग्रह नहीं

करते उन्हें निर्धन कहा जायेगा। परन्तु देखा जाये तो पशु, पक्षी, वृक्ष आदि भी वस्तु संग्रह नहीं करते तो क्या वह निर्धन है क्या उन्हें निर्धनता की श्रेणी में रखा जायेगा नहीं क्योंकि अभाव का अनुभव निर्धनता कहलाती हैं न की संग्रह न करने को निर्धन कहेंगे। वाह्य रूप से देखा जाये तो दरिद्रता और अपरिग्रह दोनों में ही संग्रह और संयोजन का अभाव है। लेकिन अभ्यन्तर रूप से दोनों के परिणामों में अन्तर है। भाव यह है कि अंतरंग भाव का ही अधिक महत्व है। बधिरंग परिग्रह में झूठ, क्रोध, मान, माया, लोभ रति, अरति, भय, जुगुप्सा, स्त्रीभेद, पुरूष वेद नपुसंक वेद है।

अतः महात्मा गाँधी जी जीवन पर्यन्त श्रम का स्म्मान किया उनके अनुसार काम कोई छोटा या बड़ा नहीं होता उसे श्रृद्धा व पूर्ण तन्मयता के साथ करना व काम के प्रति समर्पण का भाव रखना आवश्यक यदि सभी लोग श्रम द्वारा ही अपनी रोटी कमाते हैं तो देश में रोजगार की कमी नहीं रहेगी साथ ही किसी वस्तु का आभाव भी नहीं रहेगा। अतः यह आवश्यक है सब लोग श्रम का सम्मान करें साथ ही श्रम द्वारा प्राप्त धन का कुछ हिस्सा दूसरों के कल्याण के निमित्त लगाये व समाज के विषय में चिन्ता करें साथ ही अपरिग्रह के सिद्धान्त का पालन करें क्योंकि प्रकृति में सभी वस्तुयें या प्रकृति स्रोत कितने भी विशाल क्यों न हो परन्तु वे सीमित ही है। अतः क्यों न हम त्याग पर्ण भाव व संचय की प्रवृत्ति को छोड़कर उसका प्रयोग करें जिससे सभी लोगों को समान रूप से प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग करने का अवसर मिले और प्राकृतिक संसाधनों की उपयोगिता भी दीर्घकाल तक

बनी रहे इसलिये अपरिग्रह के नियम का प्रत्येक व्यक्ति से आग्रह आवश्यक है।

महात्मा गाँधी जी जीवन भर अपरिग्रह के सिद्धान्त के प्रति समर्पित रहे व श्रम का सम्मान किया। जिस प्रकार बिना श्रम रोटी खाने वाले को वे चोर कहा करते थे उसी प्रकार अधिक संचय (आवश्यकता से अधिक) करने वाले को भी वे चोर कहा करते थे।

अध्याय - ५
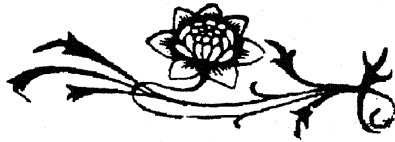
अध्याय - 5

ग्रामीण स्वावलम्बन - सर्वोदय

सर्वोदय से तात्पर्य सबका उत्थान से है। उत्थान में स्वाभाविक पूर्णता और लक्ष्य की प्राप्ति शामिल है। सर्व का अर्थ है। समस्त जीव एवं प्राणीमात्र साथ ही समग्र मानवता। सर्वोदय के चिन्तन में समस्त मानवता के साथ–साथ समस्त जीवित प्राणियों और उसके घटक सभी व्यक्तिक इकाईयों को समावेश है। सर्वोदय में जिस सर्वांगीर्ण विकास की अवधारणा हे उसमें भौतिक आध्यात्मिक और नैतिक विकास को साकार करने की व्यवस्था है। सामान्य लोगों की धारणा होती है कि भौतिक सम्पत्ति में ही उनको सुख की प्राप्ति होती परन्तु यह एक पक्षीय चिन्तन हे। क्यों मनुष्य यदि भौतिक सम्पत्ति पर ही ध्यान केन्द्रित करेगा तो यह उसकी स्वार्थपरता है। क्योंकि अपने भौतिक सुख की उपलब्धि के लिये वह अन्य समूहों व व्यक्तियों से संघर्ष करेगा। जबकि अध्यात्मिक सुख ही सच्चा सुख है। शारीरिक मुख आत्मिक सुख का साधन है। सर्वोदय का यही मूल सिद्धान्त है।

गाँधी जी का विचार था कि मानव जीवन में भौतिक सुख व आध्यात्मिक सुख का समावेश सन्तुलित अवस्था में होना चाहिये। रस्किन की पुस्तक "अनू टू दिस लास्ट" से गाँधी जी ने सर्वोदय शब्द को लिया था। जिसका तात्पर्य अनत्योदय से है। अर्थात् समाज को अन्तिम सीढ़ी में खड़े लोगों का उत्थान व कल्याण हो परन्तु गाँधी जी समस्त मानवता के कल्याण के पक्षधर थे।

गाँधी जी के विचार से पश्चिमी विचार सर्वथा भिन्न है, साधारणतः वे यह मानते हैं कि मनुष्य का काम बहुसंख्यक लोगों के सुख की वृद्धि व उनका उत्थान करना है। सुख से सम्बन्ध धन, दौलत, रूपये पैसे व शारीरिक सुख से है। परन्तु इस प्रकार के सुख को प्राप्त करने में सामाजिक नियम का उल्लंघन होता है। लेकिन सुख प्राप्ति की दौड़ में इसकी चिन्ता नहीं की जाती क्योंकि यदि थोड़े लोगों को कष्ट देकर अधिक लोगों को सुख दिया जाता है। पश्चिमी देश इसमें कोई हर्ज नहीं मानते परन्तु गाँधी जी की धारणा ''सर्वेभवन्तु सुखिनः'' की थी न कि ''बहुजन हिताय बहुजन सुखाय'' की। गाँधी जी ने अपने जीवन का आदर्श सत्याग्रह माना, शासन का आदर्श रामराज्य को माना व सर्वोदय को समाज का आदर्श माना है, जो सतय और अहिंसा पर आधारित है। इसमें वर्ग भेद जाति विहीन और शोषण रहित समाज की कल्पना है। जिसमें सभी लोगों को अपने सर्वांगीण विकास व साधन प्राप्ति का पूर्ण अवसर प्राप्त होता है।

सर्वोदय के सम्बन्ध में विनोबा जी का मत है कि ''भारत के गाँवों को स्वावलम्बी बन जाना चाहिये जहाँ तक सम्भव हो मूल्यों में उतार चढ़ाव से बचना चाहिये। आवश्यक कच्चा माल गाँव में ही पैदा होता हो तो उन्हें जरूरत का पक्का माल तैयार कर लेना चाहिये। यंत्रों पर समग्र समाज का अधिकार होना चाहिये । उत्पादन व वितरण में दलाल नहीं होने चाहिये। सभी को खाना व काम मिलना चाहिये। राष्ट्र की अर्थ–व्यवस्था की योजना सम्मिलित परिवार के ढंग पर होनी चाहिये। यदि चरखे से सभी को काम मिल सकता है तो उसे काम में लेना चाहिये। यदि आप सम्पूर्ण राष्ट्र के लिये योजना नहीं बना सकते

और भेद–भाव करना ही पड़े तो उस सूरत में मैं आपको साम्यवादी मानकर कहता हूँ आपको अपनी योजना बनाने में गरीबों के पक्ष में भेदभाव करना चाहिये। संक्षेप में सर्वोदय की मेरी रूप रेखा यही है''–

विनोबा भावे जी के विचार से स्पष्ट है कि सर्वोदय समाज में स्वास्थ्यकर, पुष्टिदायक यथेष्ट भोजन, स्वच्छ हवा–पानी, आवश्यक कपड़े, आरोग्यवर्धक घर, शिक्षा, स्वास्थ्य, रक्षा और रोग निवारण की सुविधा होनी चाहिये। मनोरंजन और ज्ञान वृद्धि के साधन तो होने ही चाहिये।

भौतिक सम्पत्ति का संग्रह निषिध है क्योंकि उत्पत्ति के साधनों पर स्वामित्व का झगड़ा ही संघर्ष का कारण है। इससे समाज दो भागों में बंट जाता है। जिससे वर्ग संघर्ष की सम्भावना जन्म लेती है और अच्छे व बुरे का ज्ञान नष्ट हो जाता है। अपना काम बनाने के लिये कोई भी रास्ता सच्चा रास्ता माना जाता है। साधन और साध्य की पवित्रता नष्ट हो जाती है। जबकि सर्वोदय स्वालम्बी व्यवस्था का निर्माण करता है।

सर्वोदय समाज में अर्थ और राज्य की शक्तियाँ विकेन्द्रित होती है। जिसमें समाज एक स्तम्भ की भाँति रहता है। राजनीतिक व आर्थिक इकाई की नींव उसी ग्रामीण क्षेत्र से होता है। जिससे आर्थिक व राजनीतिक स्वावलम्बी समाज खड़ा होगा। ग्राम–ग्राम की छोटी–छोटी इकाई एक दूसरे के सुख–दुख से परिचित होगी एक दूसरे के सहभागी होगी और इसी से एक स्वस्थ्य स्वालम्बी सर्वोदयी समाज की स्थापना होगी।

सर्वोदय समाज में आर्थिक समानता पर बल देता है। गाँधी जी ने स्पष्ट रूप से कहा कि " मेरी कल्पना की आर्थिक समानता का अर्थ यह नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति को शब्दशः एकही रकम मिले। इसका केवल इतना ही अर्थ है कि प्रत्येक को उसकी आवश्यकताओं के लिये पर्याप्त रकम मिलनी चाहिये। मैं मूल–आवश्यकताओं के अलावा और सभी बातों का निषेध नहीं करता, मगर इनका नम्बर तभी आता है जब पहले गरीबों की भी मूल–भूत आवश्यकताओं की पूर्ति हो गयी हो"

5A. लघु एवं कुटीर उद्योग का महत्व

वर्तमान समय में सबसे बड़ी समस्या यह है कि बड़े–बड़े उद्योग, कल कारखाने, यंत्रीकरण के कारण देश में बेरोजगारी व अति उत्पाद जैसे समस्यायें विद्यमान है जबकि हमेशा से यंत्रों का प्रयोग किया जाता रहा है। परन्तु वर्तमान में जिन यंत्रों का प्रयोग किया जाता है वे सूक्ष्म ओर बड़े–बड़े कल कारखानों पर आधारित होते हैं। योरोप की औद्योगिक क्रान्ति से आज तक यांत्रिक उन्नति में विश्व का स्वरूप ही बदल दिया है। यहाँ तक कि मनुष्य की आर्थिक, धार्मिक, नैतिक भावना ही बदल गयी ऐसा प्रतीत होता है जैसे विश्व नये रंग में रंग गया हो।

गाँधीजी का इस सम्बन्ध में अपना अलग दृष्टिकोण था और भारतीय परिवेश में सीमित औद्योगिकीकरण का विचार रखा। उनका मता था कि भारत जैसे अधिक जनसंख्या वाले देश में जहाँ गरीबी

अधिक है वहाँ मशीनों का प्रयोग अधिक लाभकारी सिद्ध नहीं हो सकता वह यहाँ वह यहाँ बेरोजगारी को ही बढ़ावा देगा। इसी कारण गाँधी जी का कहना था कि "मैं नहीं कह सकता कि भारत जैसे विशाल देश जहाँ करोड़ों व्यक्तियों को वर्ष में चार महीने ही काम मिलता है ऐसे में बड़े उद्योगों को बढ़ावा देकर उन्हें कैसे खुशहाल बनाया जा सकता हैं। उन बड़े उद्योगों को छोड़कर जो संभवतः गाँवों में नहीं चलाये जा सकते, अन्य समस्त बड़े तथा केन्द्रीयकृत उद्योगों का अर्थ होगा कि लाखों व्यक्तियों को बेरोजगार करना। उनके लिये सम्मानजनक व्यवस्था न होने पर वे भूखों मर जायेंगे।

लघु एवं कुटीर उद्योगों से तात्पर्य ऐसे छोटे उद्योगों की स्थापना से है जिसमें अधिक से अधिक लोगों को काम दिया जा सके साथ ही प्रत्येक स्तर के बेरोजगार का उसकी योग्यता के अनुसार समायोजन किया जा सके जिससे प्रत्येक व्यक्ति सम्मान जनक जीवन जी सके। लघु एवं कुटीर उद्योग को प्रोत्साहित करने का मूल उद्देश्य यह थाकि इससे श्रम को प्रोत्साहन तो मिलता ही है साथ ही श्रम शक्ति को रोजगार के अवसर की प्राप्ति होती है साथ ही श्रम से ही शरीर स्वस्थ्य, निर्मल मन विकसित बुद्धिं, आत्मविश्वास ओर आत्मनिर्भरता जैसे गुण विकसित होते हैं। इन गुणों से ही मनुष्य की प्रगति सम्भव है। किसी भी देश के सर्वांगीण विकास के लिए सुनियोजित परिश्रम, सुउद्देश्य और चारित्रिक दृढ़ता परमावश्यक ही नहीं, अनिवार्य है इन्हीं गुणों के कारण हमारा देश किसी समय संसार का गुरू और मार्गदर्शक था।

लघु व कुटीर उद्योग के प्रोत्साहन से देश में मित्तव्ययी प्रयोग सम्भव होता है व उसकी उपयोगिता की आयु में वृद्धि होती है। व्यक्ति के कार्य करने के गुणों का विकास होता है व व्यक्ति काम करते करते कलात्मक ढंग से उत्पादन की कला सीखता है साथ ही एकाग्रता विकास होने से उसका आत्मिक विकास भी सम्भव हो सकता है। विविध एवं उपयोग करने से उत्पादकता में भी विविधता आती है जिससे क्षेत्रीय कला संस्कृति का विकास सम्भव होता है। तदानुरूप सभ्यता का विकास होने लगता है। जैसे– भारत के दक्षिण क्षेत्र में, जलवायु, प्राकृतिक स्रोत भिन्न होने से वहाँ का रहन सहन, जीवन शैली, खानपान, काम करने की कला सर्वथा भिन्न है। इसी प्रकार उत्तर भारत में अलग और पूर्व व पश्चिम क्षेत्रों की अपनी अलग–अलग पहचान है। प्रत्येक क्षेत्र में लोग वहाँ के स्रोतों के अनुरूप काम करना सीख गये हैं व उसी के अनुरूप जीना भी और उसी में अपने जीवन का सत्य व जीवन यापन के माध्यम खोज लेते हैं।

इसी प्रकार कुटीर उद्योग का भी जीवन में अत्यधिक महत्व है क्योंकि इस प्रकार के उत्पादन केन्द्रों में सभी को योग्यतानुसार काम मिल जाता है व आय प्राप्त करने के अवसर मिल जाते हैं। यदि सूक्ष्य रूप से विश्लेषण किया जाये तो हम पाते हैं कि कुटीर उद्योग एक ऐसा उत्पादन केन्द्र है जहाँ उत्पादन का कार्य परिवार के सभी सदस्य मिल कर करते हैं जिससे योग्यता व समय के अनुसार घर के सभी सदस्य अपना योगदान देकर कुटीर उद्योग का उत्पादन करते हैं व उन्हें काम करने की कला सीखने व विकसित करने का अवसर परिवार में ही मिलता है और इससे परिवार की आय भी बढ़ती है। जैसे– बैंगलोर में

अगरबत्ती उद्योग, बनारस का साड़ी, कश्मीर का ऊनी वस्त्र उद्योग फिरोजाबाद का चूड़ी व काँच का उद्योग, मोरवी का घड़ी उद्योग व बैगाल का तांत की साड़ी का उद्योग। कुटीर उद्योग के ज्वंलत उदाहरण है परन्तु वर्तमान में इनमें भी कहीं–कहीं मशीनों का प्रयोग होने लगा है। परन्तु यह शाश्वत सत्य है कि लघु व कुटीर उद्योग के विकास से रोजगार सृजन व क्षेत्रीय सन्तुलन में वृद्धि होती है। देश की आय बढ़ती है व जनजीवन कुशल व सम्पन्न होता है। महात्मा गाँधी इसी कारण ग्रामोदय व लघु एवं कुटीर उद्योग की स्थापना के पक्ष में थे।

5B. मशीनीकरण का विरोध

महात्मा गाँधी अहिंसा के मार्ग पर चलने वाले व्यक्ति थे उन्होंने जो भी निर्णय किया वह सत्य और अहिंसा पर आधारित था। जब उन्होंने मशीनीकरण का विरोध किया तो इसके पीछे कोई क्रान्तिकारी क्रान्ति करने का अथवा बलपूर्वक अधिकार छिनने का उद्‌देश्य नहीं था उनकी सोच थी कि मशीनीकरण से गरीब और मजदूरों का रोजगार छिनेगा उनके अधिकारों का हनन होगा इसके साथ–साथ पूँजीवादी शक्तियाँ बलवान होगीं जिससे कामगारों का और अधिक शोषण होगा। इसलिए ऐसी मशीनों का स्थापित किया जाना सर्वोदय के लिए कतई उचित नहीं है। दूसरी ओर भारी मशीनों के स्थापित हो जाने से प्राकृतिक संसाधनों पर अतिरिक्त दबाव पड़ता है जिसके कारण उसका शोषण अधिक मात्रा में किया जाता है और उनकी जीवन अवधि कम हो जाती है। जिसके घातक परिणाम आने

वाली पीढ़ियों पर भी पड़ते हैं। मांग के अनुसार पूर्ति का आभाव होता है जिसके कारण न्यूनतम उपभोग वस्तु भी उपलब्ध नहीं होती। जिससे वर्ग संघर्ष उत्पन्न होने की सम्भावना बनी रहती है। यह समाज में अराजकता व अपराधिकरण को प्रोत्साहन देती है इसलिए मशीनीकरण का विरोध अत्यन्त आवश्यक है इसके साथ ही यह भी ध्यान रखना है कि पर्यावरण का सन्तुलन भी सन्तुलित अवस्था में रहे क्योंकि भारी मशीनों के प्रयोग से प्राकृतिक संसाधनों का अतिरिक्त विदोहन पर्यावरण पर विपरीत प्रभाव डालता है। इसके साथ–साथ मशीनीकरण के द्वारा फैलने वाले वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण से भी मानवजीवन पर प्रभाव पड़ता है।

औद्योगिकीकरण से धन का संयम कुछ लोगों के हाथ में आकर आर्थिक असामनता को प्रोत्साहित करता है। इसी कारण गाँधी जी ने कहा "मैं भारत का औद्योगिकरण अपने ढंग पर करना चाहता हूँ। ग्रामीण समुदाय को पुर्नजीवित करना चाहिए। भारत के गाँव अपने शहरों व कस्बों की आवश्यकता का सारा माल तैयार करते हैं। परन्तु जब गाँव विदेशी माल से भर जायेंगे तो वे विदेशी बाजार बन जायेंगे। और विदेशों से सस्ती और भड़कीली चीजें मँगाकर गाँवों में उनकी भरमार होने लगेगी तो ग्रामीण लोगों का धन चूसा जाने लगेगा। और इसी कारण भारत दरिद्र हो गया। इसीकारण गाँधी जी गाँवों का औद्योगिकीकरण न करके उनका नव संस्कार करना चाहते थे और जब यह होगा तो ऊँच–नीच की भावना का सर्वथा उन्मूलन हो जायेगा और सभी अपने–अपने कार्य में लग जायेंगे। अर्थात् गाँधी जी आर्थिक संगठन को इस ढंग का बनाना चाहते थे। जिससे जनसाधारण को

लाभ हो और समाज में अधिकतम आर्थिक समानता स्थापित हो सके।

बड़े यंत्रों आदि से चलने वाले उद्योग के लिए बहुत से यन्त्रों की आवश्यकता पड़ेगी जो देश में उपलब्ध नहीं हैं। जिन्हें विदेशों से आयात करना पड़ेगा जो हमें विदेशियों की सुविधानुसार मिलेंगे। इसके साथ ही उन्हें चलाने के लिए अनुभवी मशीनमैनों की आवश्यकता पड़ेगी जो देश में उपलब्ध न होने पर विदेशों से ही बुलाने पड़ेंगे। अतः इस सम्बन्ध में गाँधी जी का विचार था कि मैं ऐसी मशीनों का स्वागत करूँगा जो झोपड़ी में रहने वाले करोड़ों मनुष्यों के बोझ को हल्का करती है। जबकि बड़े पैमाने के उत्पादन से बेकारी फैलती है और सजीव उत्पादक बेकार जो जाता है और इस बेकारी के कारण अर्थव्यवस्था में भ्रष्टाचार फैलता है।

आगे चलकर इन्हीं बड़ी मशीनों के द्वारा आवश्यक एवं विलासिता पूर्ण वस्तुओं का उतपादन मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति की जगह पूरक आवश्यकताओं को पूरा करने में अपव्यय करता है। और यही से वर्ग संघर्ष भी प्रारम्भ होता है। इसी कारण नये अविष्कारों के सम्बन्ध में गाँधी जी अत्यन्त सजग थे और उनका विचार था मैं प्रत्येक ऐसे विचार का स्वागत करूँगा जिससे सबका हित होता हो।'' परन्तु मैं ऐसे जहरीली गैस का स्वागत नहीं कर सकता जो हजारों लोगों को एक साथ मारती हो। यहीं से उन्होंने उद्योगों के विकेन्द्रीकरण को प्रोत्साहित करने का विचार रखा क्योंकि भारी उद्योग स्वकेन्द्रित होते हैं इसके द्वारा किसी एक उद्यमी को ही लाभ होता है और वहीं धीरे–धीरे और सम्पन्न होता जाता है।

इस प्रक्रिया में गरीबों का परिश्रम व बेरोजगारी भी छिपी हुई है। यदि इन उद्योगों को विन्द्रित कर दिया जाता है तो कई लोगों को काम तो मिलेगा ही साथ ही काम करने वाले की सहभागिता भी बड़ेगी जिसके कारण समानता व सर्वोदय को बल मिलेगा।

5C. विकेन्द्रीकरण

राज्य सत्ता एवं आर्थिक शक्तियों का विकेन्द्रीकरण एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें जन सामान्य की सहभागिता बढ़ती है और प्रत्येक व्यक्ति अपने, काम के प्रति आत्मविश्वास रखता है। इसके साथ–साथ शिष्टाचार की सम्भावना भी कम हो जाता हैं और देश की अर्थव्यवस्था अपने निजी संसाधनों पर संचालित होने में सक्षम हो जाती है। रोजगार में वृद्धि / आय का समान वितरण एवं योग्यता के अनुसार सभी को अवसर प्राप्त होने के की सम्भावना प्रबल हो जाती है।

विकेन्द्रीकरण में राजनीतिक या आर्थिक शक्ति के संकेन्द्रा का निषेध होता है। अतः गाँधी जी की अर्थ – रचना में राज्य की विभिन्न इकाइयों को विकेन्द्रीत तथा स्वावलम्बी बनाना एक मौलिक सिद्धान्त है। प्रत्येक ग्राम या इकाई को अपनी जरूरत के लिए पर्याप्त सामग्री पैदा करनी चाहिये जो सामग्रियाँ छोटी इकाई पैदा न कर सकें उन्हें अन्तर ग्राम और अन्तर इकाई उ़द्योगों द्वारा पैदा करना चाहिए।

इसलिए गाँधी जी ने सलाह दिया था यदि भारत अहिंसात्मक तरीके से प्रगति करना चाहता है तो अनेक चीजों का विकेन्द्रीकरण करना पड़ेगा। इसलिए गाँधी जी ने लघु एवं कुटीर ग्राम उद्योगों के

विकास के लिए कार्यक्रम बनाना जिससे प्रत्येक ग्रामवासी की जीविका चलायी जा सके। ग्रामीण उद्योगों का उत्पादन बढ़ाने के लिए वे चाहते थे कि श्रमिकों को उनके गाँव घर से अलग किया जाये बल्कि उनका घर ही फैक्ट्री बने।

इसी से गाँधी जी ने कहा कि" हमें अपनी नित्य की उपयोगी चीजें वही खरीदनी चाहिए जो गाँवों में केवल बनती हैं, हो सकता है कि ग्रामों में बनी चीजों में अभी सफाई न हो। इसके लिए कारीगरों को प्रोत्साहन देने का प्रयत्न करें ताकि उनमें सफाई आये न कि उनको लेने से इन्कार कर दे। हमें ग्रामवासियों की खोई हुई कारीगरी या कलापूर्ण प्रतिभा को जाग्रत कर देना चाहिए।

लेकिन यह भी सच है कि "यदि कोई उद्योग जीवन निर्वाह योग्य न्यूनतम मजदूरी दने में समर्थ नहीं है तो उसे बन्द कर देना चाहिए। हम जिस किसी उद्योग को हाथ में ले लें उसमें दी जाने वाली मजदूरी समुचित निर्वाह योग्य हो क्योंकि आजकल केन्द्रीकरणओर अत्यंत विकसित ढंग का मशीनीकरण करने की जो हवा चल रही है उसके सम्मुख गाँवों के पुनरूद्धार का कार्य कोई आसान नहीं हैं।

17 वर्षों तक भारी उद्योगों से जब देश को बहुत हानि हो चुकी तो नेहरू जी ने कहा कि, महात्मा गाँधी जी सही कहते थे और 11 दिसम्बर 1963 को संसद में योजना पर बोलते हुए पं0 जवाहर लाल नेहरू ने कहा मैं अधिकाधिक महात्मा गाँधी जी के बारे में सोचने लगा हूँ। मैं पूरी तरह सो आधुनिक मशीन का प्रशंसक हूँ बेहतरीन मशीन और बेहतरीन तकनीक चाहता हूँ लेकिन हमारे देश में हालात यह है कि हम आधुनिक युग में चाहें जितना बढ़ जाए, उसका बहुत दिनों तक

हमारे लोगो की बहुत बड़ी संख्या पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा उन्हें उत्पादन में भागीदार बनाने के लिए कोई और उपाय करना होगा, चाहे उत्पादन यन्त्र आधुनिक तकनीक के मुकाबले में बहुत कुशल न हो। इससे साफ जाहिर है कि नेहरू जी बड़े पैमाने के औद्योगीकरण की जगह लघु स्तरीय उत्पादन की मंशा रखने लगे थे। किन्तु यह भाव उनके महाप्रयाण के मात्र पांच माह पूर्व का है। क्योंकि गाँधी जी जानते थे कि बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण किये जाने का परिणाम यह होगा कि होड़ और बाजार की समस्याएं पैदा होगीं और गाँव का शोषण होगा। इसलिए हमें इस बात पर आग्रह रखकर चलना चाहिए कि गाँव आत्मनिर्भर हों। यदि ग्रामोद्योगों का यह स्वरूप कायम रखा जाये तो फिर इस पर कोई आपत्ति नहीं कि गाँव वाले आधुनिक यंत्र और औजारों का उपयोग करें – ऐसे यंत्र–औजारों का जो वे आसानी से प्राप्त कर सकें। हाँ इन यन्त्रों का उपयोग दूसरों के शोषण के लिए नहीं हो।

इस प्रकार की अर्थव्यवस्था लघु यंत्र आधारित तथा श्रम प्रधान ही होगी, साथ ही लघु यंत्र में सुधार लाने के लिए निरंतर और नियोजित ढंग से प्रयास होने चाहिए, जिससे कि मूल्यों में वृद्धि किये बिना उसकी संरचना एवं उत्पादकता बढ़ती जाए। जहाँ विद्युत शक्ति आवश्यक है और उपलब्ध हो वहीं, उसका उपयोग अर्थव्यवस्था की समग्र एवं सम्पूर्ण तस्वीर को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए जिससे कि मूल्य, उत्पादन, वितरण तथा रोजगार में असन्तुलन की सृष्टि तथा सम्भव न होने पायें। स्थानीय एवं क्षेत्रीय आवश्यकताओं से जुड़े। इसके लिए क्षेत्रीय स्तर पर सर्वेक्षण एवं नियोजन आवश्यक है।

देश में जो मनुष्य – भूमि अनुपात है और जिस गति से जनसंख्या बढ़ जाती है उसे देखते हुए मनुष्य–भूमि अनुपात और जिस गति से जनसंख्या बढ़ रही है उसे देखते हुए ग्रामीण आबादी यदि केवल भूमि पर रहेगी तो कृषि के विकास के बावजूद वह उत्तरोत्तर निर्धन बनती जायेगी। इसलिए विकेन्द्रीत औद्योगिकता का घनिष्ठ सम्बन्ध कृषि से कम प्रत्येक बहुआयाम समूह कृषि औद्योगिक समुदाय के रूप में विकसति हो सके। कृषि औद्योगिक का अर्थ है कृषि और उ़द्योग का संगठनात्मक समन्वय। इस विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था का अर्थ होगा एक नयी यंत्र प्रौद्योगिकी के एक नयी सामाजिक आर्थिक प्रोद्योगिकी का निर्माण करना। विकेन्द्रीकरण का रूप वैसा नहीं है जो पश्चिम या जापान की अत्यन्त केन्द्रित अर्थव्यवस्था में प्रतिष्ठित है, उन देशों में जो विकेन्द्रीकरण है। वह केन्द्रीयकरण का अनुसेवी है और प्रकारांतर उसके ही अस्तित्व के लिए कायम है। इसे अर्थव्यवस्था का मुख्य स्वरूप विकेन्द्रीकरण का होगा।

विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था से जनता को तत्कालिक लाभ होगा यह अर्थव्यवस्था वृह्द पैमाने पर रोजगार को सृष्टि करेगी। सम्पत्ति का उत्पादन इस ढंग से करेगी कि विस्तृत आधार पर उसका विततरण सुनिश्चित हो सकेगा और साधारण उपभोक्ताओं को वेतन सामग्री तत्काल उपलब्ध हो सकेगी। केन्द्रिय क्षेत्र में औद्योगीकरण का लाभ ऊपर से नीचे धीरे–धीरे अन्तः भ्रमित होकर पहुंचाने वाले है। पश्चिम में केन्द्रिय औद्योगीकरण का लाभ सामान्य जनता तक पहुँचाने में सौ साल से कम नहीं लगा। भारत जैसे देश में जहाँ इस प्रकार की गरीबी है जहाँ न्यूनतम आवश्यकता की वस्तुएं भी इतनी कम है और बेकारी

और अर्द्ध बेकारी की समस्यायें इस प्रकार से पकड़ गयी हैं तथा इतने विशाल परिणाम है कि यदि जनता का कल्याण करना आर्थिक विकास का लक्ष्य हो तो केन्द्रीत नयी विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था का लक्ष्य है तो केन्द्रीय नयी विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था तत्काल स्थापित की जानी चाहिए।

भारत में कुछ लोग हाल ही में औद्योगिकरण के विरूद्ध वक्तव्य देने लगे हैं जबकि यहाँ इस दिशा में सिर्फ थोड़े में ही कदम उठाये गये हैं। समस्याओं के झुठलाने के लिए गाँधी जी के नाम की दुहाई दी जाती है। यह बहुत बड़ी विकृति है क्योंकि, गाँधी जी औद्योगिकरण के विरूद्ध नहीं थे, वह पश्चिमी उद्योगवाद की आत्मा के विरूद्ध थे जिससे खतरनाक लोभी संग्रहण शीतलता उपलजती थी और साम्रज्वाद का अस्त भी था। उन्होनें हमें उस रास्ते पर चलने से आगाह किया था जो अन्ततः हमें उपभोगवाद और उद्योगवाद की वस्तु–पूजा की ओर ले जाता है। गाँधी जी अक्सर ही जीवन की गुणवत्ता की बात करते थे, वास्तव में यह मांग पक्ष में औद्योगीकरण को उपभोगवाद का आधर बनाने का विकल्प ही था। आज जब हम उपयुक्त प्राविधि की बात करते हैं और इसे गाँधीवादी बनाते हैं तो हमारा आशय क्या होता है। गाँधी – दर्शन के अनुरूप उपयुक्त प्रविधि उपयुक्त औद्योगिकरण ही है। गाँधी जीमानव की उनमुक्ति के लिए तकनीकी, वैज्ञानिक, औद्योगिक सभी स्थितियों के लिए तैयार थे। इसके आगे उत्पादन के क्षेत्र में कसौटी यही है कि उस प्राविधि या वैज्ञानिक खोज से अलगाव को प्रोत्साहन न मिले।

अध्याय - ६
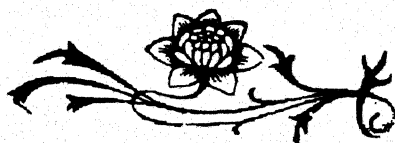
अध्याय - 6

6A. स्वतंत्रता के पश्चात् मिश्रित अर्थव्यवस्था आर्थिक पद्धति (समाजवाद)

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत की अर्थव्यवस्था इस स्थिति में नही थी कि उसे समाजवाद अथवा पूँजीवाद की ओर ले जाया जा सके। परन्तु तात्कालिक प्रशासकों की इच्छा भारतीय अर्थव्यवस्था को समाजवाद की ओर ले जाने की थी परन्तु आर्थिक मजबूरियों के कारण यह सम्भव नहीं हो सका इसलिए मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया गया। इसके अन्तर्गत अति आवश्यक उत्पादन के लिए सरकार ने स्वयं पूँजी निवेश किया तथा अन्य उत्पादनों में निजी क्षेत्र को अनुमति दी। बहुत सारे अति आवश्यक उत्पादन को निजी क्षेत्र से अपने हाथों में ले लिया क्योंकि सरकार का विचार था कि अगले 15 वर्षों में अर्थव्यवस्था को पूर्णतया समाजवादी बना दिया जायेगा इस दृष्टि से मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाकर देश के आर्थिक विकास में सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों की सहभागिता सुनिश्चित की गई तथा दोनों क्षेत्रों में रोजगार के अवसर उत्पन्न करने के साथ–साथ प्रति व्यक्ति आय को बढ़ाकर राष्ट्रीय आय में वृद्धि के साथ–साथ देश के आर्थिक विकास की ओर कदम बढ़ाया गया। इसके साथ ही समाज में असमानता को दूर करने के लिए राजस्व की व्यवस्था इस प्रकार से व्यवस्थित की गयी जिससे समाजवादी समाज की स्थापना की जा सके जहाँ सभी को समान अवसर प्राप्त हो। किसी प्रकार का भेदभाव समाज में न रहे

जातिगत आधार पर धर्म एवं पंथ के आधार पर समाज के विभाजन को रोक कर राष्ट्रीय एकात्मता की भावना को मजबूत कर समाजवादी भारतीय समाज की स्थापना की जा सके।

6-A1. बड़े पैमाने के उद्योग

स्वतंत्रता के बाद भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू अर्थव्यवस्था को उ़द्योग आधारित बनाना चाहते थे वह यूरोपीय विचारधारा से प्रभावित थे जिसके कारण उन्होंने महानगरों में भारी उद्योगों की स्थापना की। जिसके कारण प्रारम्भिक स्थिति में तो रोजगार में वृद्धि हुई। परन्तु विकास की प्रक्रिया में असन्तुलन वहीं से प्रारम्भ हो गया।

बड़े पैमाने के उद्योगों की स्थापना मुख्यतः उन शहरों में की गई जो पूर्व से ही औद्योगिक दृष्टि से सुदृढ़ थे तथा जहाँ पहले से ही उद्योग संचालित हो रहे थे इस कारण शहरीकरण को बल मिला और लोगों का रूझान शहरों की ओर बढ़ने लगा जिसके कारण बड़े पैमाने के उद्योगों में रोजगार पाने वालों की संख्या में वृद्धि होने लगी इसके साथ बढ़े उद्योगों से सहयोगी छोटे–छोटे उद्योग भी स्थापित किये जाने लगे और औद्योगिक क्षेत्र के आसपास आवासीय बस्तियों की स्थापना भी होने लगी।

सामान्यतः उद्योगों की स्थापना शहरों के बाहर की जाती रही जिससे खेती योग्य भूमि की मात्रा में कमी होती चली गयी और कृषि उत्पादन में कमी आयी परन्तु शहरी सीमाओं का अत्यधिक विस्तार हो

गया इसी के साथ–साथ जहाँ उद्योगों की स्थापना की गयी उन शहरों का विकास अन्य शहरों की तुलना में अधिक हुआ, इससे लोगों का आकर्षण उद्योग की ओर बढ़ा और वे बड़े शहरो की ओर उन्मुख होने लगे। धीरे–धीरे शहर और गाँवों का अन्तर दिखायी देने लगा।

दूसरी पंचवर्षीय योजना उद्योग की ओर उन्मुख थी जिसके अन्तर्गत सार्वजनिक क्षेत्र में अनेक भारी उद्योगों की स्थापना की गयी, क्योंकि सरकार का उद्देश्य अर्थव्यवस्था को समाजवादी बनाना था इसलिए इन सार्वजनिक उद्योगों का उद्देश्य अधिकतम सामाजिक लाभ रखा गया जिसके कारण अधिकतम कल्याण व न्यूनतम मूल्य निर्धारित किया जाता रहा। देश के समग्र विकास व तीव्र औद्योगिक विकास को ध्यान में रखते हुये निजी क्षेत्र में भी बढ़े पैमाने के उद्योगों को स्थापित करने की अनुमति दी गयी परन्तु यह व्यवस्था लाइसेन्स प्रणाली के अन्तर्गत थी ना कि मुक्त करों की सरकार असमानता को दर कर सामाजिक समानता व समरसता स्थापित करना चाहती थी इसी कारण आर्थिक विसंगतियों पर नियंत्रण हेतु ही लाइसेन्स व्यवस्था को अपनाया गया। बड़े उद्योगों के उत्पादन को भी अनियंत्रित नहीं होने दिया गया उसकी गुणवत्ता को बनाये रखने के लिये उत्पादन की मात्रा भी सीमित रखी गयी व उसका परीक्षण करके ही बिक्री हेतु निर्गत करने हेतु गुणवत्ता नियंत्रण (क्वालिटी कन्ट्रोल) की व्यवस्था भी की गयी। इन उत्पादों के न्यायपूर्ण समान वितरण हेतु वितरण व्यवस्था भी परमिट व कोटे के आधार पर की गयी।

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में चार बडे पैमाने के सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योग थे एक उद्योग जो निजी नियंत्रण मे था उसे सरकार ने

अपने नियंत्रण में लेकर इन उद्योगों की संख्या पाँच कर दी। यह पाँचवा उद्योग बैंगलोर का वायुयान बनाने का उद्योगपति का था जिसे आज HAL बैंगलोर के नाम से जानते हैं। 1995 तक सार्वजनिक क्षेत्र के बड़े केन्द्रीय सरकार के उद्योगों की संख्या 248 हो गयी थी। जबकि प्रान्तीय सरकार के भारी उद्योग भी अत्यधिक अलग रहे। निजी क्षेत्र के उद्योग भी अत्याधिक बढ़े। 1991 के बाद नीतिगत परिवर्तन के पश्चात् इन निजती भारी उद्योगों की संख्या में पर्याप्त मात्रा में आर्थिक व सामाजिक उन्नति का वातावरण बदलने लगा। उद्योग क्षेत्र में रोजगार में पर्याप्त वृद्धि होने लगी साथ–साथ राष्ट्रीय आय व प्रति व्यक्ति आय में भी वृद्धि हुई। अब हम स्वतंत्रता के पश्चात् एक लम्बे काल खण्ड का मूल्यांकन भारी व बड़े उद्योगों की स्थापना के आधार पर करते हैं तो हम पाते हैं कि विकास की दर अन्य देशों की तुलना में अत्यन्त धीमी व मन्द गति से हुई साथ ही इन भारी उद्योगों के कारण ही विकास की प्रक्रियसा में असन्तुलन स्पष्ट दिखाई देते हैं।

अधिकतर बड़े उद्योगों को सरकार ने सार्वजनिक क्षेत्रों के लिये सुरक्षित रखा था व कुछ उद्योगों को निजी क्षेत्र में लाइसेन्स के अंतर्गत स्थापित करने के लिए संरक्षित रखा।

6-A2. ग्रामीणों का शहरों की ओर पलायन

स्वतंत्रता के पश्चात् जिस प्रकार शहरीकरण प्रारम्भ हुआ और साथ ही बड़े व भारी उद्योगों की स्थापना महानगरों में की गई, उससे शहरी क्षेत्रों में विकास व उन्नत जीवन दिखाई देने लगा साथ ही

रोजगार की सम्भावनायें भी इसी क्षेत्र में अधिक दिखाई दी। इसके साथ–साथ ग्रामीण क्षेत्रों की उपेक्षा की गई यहाँ गाँधी जी ग्राम विकास की व्यवस्था पर अधिक बल देते थे वहीं देश की अर्थव्यवस्था ग्रामीण क्षेत्र की उपेक्षा व कृषि पर कम केन्द्रित रही जिसके कारण ग्रामीण क्षेत्र से लोगों का पलायन बाहरी क्षेत्रों की ओर प्रारम्भ हो गया। शहरी क्षेत्रों में मिलने वाली सुविधायें, उच्च जीवन स्तर, शिक्षा की व्यवस्था भी बाहरी क्षेत्रों में अधिक उन्नत रही व ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा व्यवस्था तुलनात्मक दृष्टि से पिछड़ी हुई थी।

रोजगार की सम्भावनायें शहरों में अधिक पायी जाती थी क्योंकि उद्योगों की स्थापना इसी क्षेत्र में अधिक हुई थी जबकि गाँवों में रोजगार के साधन ना के बराबर ही उपलब्ध थे तथा खेती इतनी सक्षम नही थी कि वर्ष भर काम उपलब्ध करा सकें। कृषि को जीवन यापन का साधन मात्र ही माना गया। इसके साथ–साथ समस्त किसानों के उत्पीड़न से भी लोग अपनी अगली पीढी को गाँवों में नहीं बसाना चाहते थे। निरन्तर परिवार के विभाजन व उपविभाजन के किरण भूमि भी विभाजित होती चली गयी जिसके कारण जोतों का आकार छोटा होता चला गया परिणाम स्वरूप देश के 80 प्रतिशत किसान सीमान्त किसानों की श्रेणी में आ गये जिनके पास एक से दो एकड़ की ही जोत थी जिसके कारण वे अपने परिवार का पालन करने में केवल खेती द्वारा सक्षम नहीं रह गये। इस कारण न चाहते हुये भी रोजगार पलायन करना पड़ा। कुछ किसान जो शहरों के आसपास के थे वे खेती के साथ–साथ सुबह से शाम तक शहरों में काम करते व शाम वापस अपने गाँवों में आ जाते जिससे उनकी आय में वृद्धि हुई व

खेती भी साथ–साथ होती रही परन्तु बहुत से ग्रामीण लोग खेती अपने परिवार के वृद्ध व परिवार की महिलाओं के भरोसे छोड़ आय कमाने के लालच में दूर–दूर महानगरों की ओर पलायन कर गये, जिससे खेती की उपेक्षा हो गयी और परिणाम स्वरूप खेती का उत्पादन भी नीचे गिरने लगा। 1947 में कृषि क्षेत्र द्वारा राष्ट्रीय आय में 45 प्रतिशत का सहयोग दिया जाता था वह पलायन व उपेक्षा के कारण आज 32.8 प्रतिशत पर पहुँच गयी।

कृषि क्षेत्र में मूलभूत सुविधाओं का सतत् आभाव होने के कारण लोगों ने इस ओर ध्यान देना कम किया क्योंकि आय कम और परिवार के पालन व सामाजिक दायित्व निर्वहन हेतु व्यय अधिक होता था जिसके कारण किसान साहूकार महाजनों से ऋण लेता था और वह ऋण से सदैव दबा रहता था क्योंकि अशिक्षित होने के कारण वह साहूकार महाजनों के धोखे में कहीं भी अंगूठा लगाता था जिसके कारण उसका पीढ़ी दर–पीढ़ी शोषण होता रहता था कभी–कभी ऋण चुकता न कर पाने के कारण उसकी भूमि भी ऋण देने वाला छीन लेता था व अपना कब्जा कर उसे बेदखल कर देता था। सामाजिक रूढ़ियाँ जो ग्रामीण आँचलों में अधिक पायी जाती थी जातिगत ईर्ष्या के कारण भी लोग भागकर शहरों में मजदूरी करने को ही अच्छा समझते थे। जो किसान अनेक लोगों का पेट भरता था वह शोषण व उत्पीड़न के कारण पलायन कर शहरों की ओर भाग आया और स्वयं मजदूरी कर दूसरों पर आश्रित होकर भुखमरी की कगार पर पहुँच गया। इसी प्रकार स्वस्थ सुविधायें भी ग्रामीण क्षेत्रों में अत्यधिक निम्न व खराब रही जिसके कारण लोगों की मृत्यु तक हो जाती थी क्योंकि रोग की

पहचान व कारण ही पकड़ में नहीं आता था तो निवारण केसे सम्भरव होता इस कारण भी लोगों को शहरों की ओर पलायन करना पड़ता था।

इसी कारण गाँधी जी का मत था कि सर्वप्रथम गाँवों का विकास या ग्रामोदय की ओर ध्यान देना चाहिये तभी सर्वोदय सम्भव हो सकेगा क्योंकि देश की 90 प्रतिशत जनसंख्या तात्कालिक समय में गाँवों में निवास करती थी और खेती के कार्य से जुड़ी हुई थी। ऐसे भी उसकी उपेक्षा करना एक बहुत बड़ा अपराध होगा। यदि गाँवों में ही समस्त सुविधायें उपलब्ध करा दी जाये उन्हें शहरों के समान ही उन्नत व विकसित बना दिया जाय तो शहरों का विकास स्वतः ही हो जायेगा क्योंकि शहरों में खाद्यापूर्ति गाँवों से ही होती है। बड़े उ़द्योगों को कच्चा माल भी खेती के माध्यम से ही उपलब्ध होता है। यदि गाँवों का या कृषि का उत्पादन गिरेगा जिससे शहरों में आपूर्ति व उद्योगों में कच्चे माल की पूर्ति प्रभावित होगी जिससे शहरों में वस्तुओं के मूल्य बढ़ेंगे और सन्तुलन बिगड़ेगा।

यदि गाँवों में वे सारी सुविधायें उपलब्ध करा दी जाये जो शहरी क्षेत्रों में उपलब्ध है और रोजगार हेतु कृषि आधारित लघु या कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहित किया जाये तो गाँवों का विकास होगा और खेती का उत्पादन बढ़ेगा। जिससे शहरों व उद्योगों में आपूर्ति बढ़ेगी और मूल्य नियंत्रित रहेंगे इससे हम अतिरिक्त उत्पादन का निर्यात कर विदेशी मुद्रा भी अर्जित कर सकते हैं और ग्रामोदय राष्ट्रोदय और सर्वोदय सम्भव हो सकेगा और ग्रामीणों का शहरों की ओर पलायन रोका जा सकेगा।

पलायन की यह स्थिति जहाँ खेती व ग्रामों की उपेक्षा कराती है वहीं शहरी क्षेत्रों में भी अनेक समस्याओं को जन्म देती है। क्योंकि गाँवों से शहर की ओर आने वाले लोग अपने आवास की उचित व्यवस्था करने में तो सक्षम नहीं होते क्योंकि उसमें धन अधिक व्यय होता है अतः वे अपने आवास के लिए रेल की पटरी के किनारे, नदी के किनारे व सड़कों के किनारे ही झोपड़ी बनाकर रहते हैं। इसके साथ ही बड़े उद्योगों के आसपास भी ऐसी बस्तियाँ बनाकर रहते हैं जिससे शहरों में स्वच्छता की समस्या जन्म लेती है। जिसके कारण स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। सामान्य वितरण प्रणाली भी प्रभावित होती है। धीरे–धीरे आगे चलकर जब इन लोगों के बच्चे बड़े होकर समाज की चमक–दमक से आकर्षित होते हैं और उसे पाने में असफल होते हैं तो अपराध बढ़ता है। जिससे सामान्य नागरिकों का जीवन सकट में पड़ने लगता है। अनेक महानगरों में इस प्रकार की स्लम बस्तियाँ पायी जाती है। ये लोग धीरे–धीरे आय पाने के लिए छोटे–छोटे काम धन्धे करते हैं तो निम्न श्रेणी की स्वास्थ्य के लिए हानिकारक वस्तुयें बाजार में बिकने लगती है। अनेक बुराइयाँ भी पनपने लगती हैं।

शहरी बेरोजगार लोगों पर इसका प्रमुख बुरा प्रभाव पड़ता है। उन्हें रोजगार मिलना कठिन हो जाता है क्योंकि गाँव का व्यक्ति कम मजदूरी में काम कर देता है। जबकि शहरी व्यक्ति अधिक मजदूरी माँगता है। क्योंकि उसका व्यय अधिक होता है। इस कारण शहरी क्षेत्रों में बेरोजगारी का दबाव बढने लगता है और शहरी क्षेत्र भी असन्तुलन में आ जाते हैं। इस प्रकार यदि ग्रामीण क्षेत्र से शहरों की ओर होने वाले पलायन को यदि रोका जाये तो ग्रामीण विकास तो होगा ही साथ

ही शहरी विकास भी सम्भव होगा क्योंकि दोनों क्षेत्र एक दूसरे के पूरक हैं परन्तु यह तभी सम्भव है जब हम गाँवों का समग्र विकास करने में सक्षम होते हैं और उनमें वे सभी सुविधायें उपलब्ध करा सके जो शहरों में है साथ ही कृषि को उच्च प्राथमिकता देकर उसे एक उद्योग की तरह सभी सुविधायें प्रदान करे। व गाँवों में रोजगार के अवसर इस प्रकार उपलब्ध करा सके जो ग्रामीण परिवेश के अनुरूप व उसे अक्षुण रखने में सक्षम हो। ऐसी स्थिति में पलायन को नियंत्रित कर सन्तुलित विकास सम्भव होगा जहाँ गाँव व शहर एक साथ उन्नति कर सके।

6-A3. औद्योगीकरण व उद्योगों का केन्द्रीकरण

स्वतंत्रता के पश्चात देश के नीति निधारकों ने उद्योग को अधिक वरीयता प्रदान की। उन्होंने गाँधी जी के ग्रामोदय उद्योग के विकास में ही देश के विकास का व उन्नति का भविष्य खोजने का प्रयत्न किया। परिणाम स्वरूप देश में औद्योगीकरण की हवा बह चली और बड़े तथा भारी उद्योगों की स्थापना की जाने लगी। सरकार देश की अर्थ व्यवस्था को स्वतंत्र नहीं छोड़ना चाहती थी इस लिये उसने अधिकतर उद्योगों को सार्वजनिक क्षेत्र के अन्तर्गत ही स्थापित किया इसके साथ–साथ सरकार देश को पूर्ण समाजवाद की ओर ले जाने का संकल्प कर चुकी थी जिसका मूल उद्‌देश्य अधिकतम सामाजिक लाभ का था इसलिये बिना लाभ हानि के वस्तु को न्यूनतम मूल्य में उपलब्ध कराने के लिये सरकार स्वयं पूँजी निवेश कर उद्योगों की स्थापना करने लगी परन्तु पूँजी की कमी के कारण सरकार औद्योगीकरण

को सार्वजनिक क्षेत्र तक ही सीमित रखने में सफल नहीं रही उसे निजी क्षेत्रों की सहभागिता को भी सुनिश्चित करना पड़ा इसके साथ–साथ सरकार ने कुछ निश्चित उद्योग इस क्षेत्र के लिये निर्धारित किये व उन्हें भी स्थापित करने के लिये विभिन्न प्रकार के लाईसेन्स व कोटा प्रणाली को तय कर रखा था। जिससे औद्योगिक क्रान्ति का अतिरिक्त लाभ उठाकर उद्यमी जनता का शोषण न कर सकें। अतः निजी क्षेत्र के लिये औद्योगीकरण के दरवाजे खोले तो गये परन्तु नियंत्रण के साथ में। इसी कारण उत्पादकता में अपेक्षित वृद्धि नहीं हुई जिससे न्यायपूर्ण वितरण को संचालित करने के लिये भी सार्वजनिक वितरण प्रणाली को अपनाया गया।

पाँच आधारभूत उद्योगों के बिना देश के विकास की गति को तीव्र कर पाना सम्भव नहीं था इसलिये कोयला, (सार्वजनिक क्षेत्र में) लोहा (निजी क्षेत्र में) शक्कर (सार्वजनिक व निजी क्षेत्र में) कपड़ा (निजी व सार्वजनिक क्षेत्र में) को स्थापित करने पर बल दिया गया। प्रारमभ में उत्पादन कम होने के कारण इनके उत्पादों को भी कोटा प्रणाली के अन्तर्गत ही वितरित कराया गया साथ ही मूल्य पर भी सरकार का नियंत्रण रहता था। जिससे आवश्यकतानुसार कम मूल्य पर जनता की वस्तु प्राप्त हो सके। जैसे– विवाह इत्यादि के लिये 100 किलोग्राम शक्कर का परमिट वधू पक्ष को व 50 कि0ग्रा0 का वर पक्ष को दिया जाता था जो राशन की दुकान से नियंत्रित मूल्य पर मिलती थी। इसी प्रकार मकान निर्माण के लिये सीमेन्ट का परमिट निरीक्षक द्वारा स्वीकृत मात्रा का निर्माता को दिया जाता था। जिससे उपभोक्ता की आवश्यता भी पूरी हो जाये व उसका शोषण भी न हो।

यह अवश्य निरन्तर होता रहा कि सरकार सार्वजनिक क्षेत्र में बड़े उद्योगों की स्थापना कर औद्योगीकरणको आगे बढ़ाती रही।

6-B. अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

भारतीय अर्थ व्यवस्था पर स्वतंत्रता के पश्चात् अपनायी गयी मिश्रित अर्थव्यवस्था के परिणाम व प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित हुये सभी क्षेत्रों पर इसका प्रभाव कुछ ना कुछ अवश्य पड़ा। कुछ क्षेत्रों में पर्याप्त उन्नति देखने को मिली, तो कुछ क्षेत्र विकास के दौर में पीछे रह गये। अब चाहे वे किसी भी कारण के शिकार हुये हों। औद्योगिक क्षेत्र उन्नति के शिखर पर निरन्तर आगे की ओर बढ़ता गया जबकि ग्रामीण कृषि का क्षेत्र अविकसित ही रहा। प्रारम्भिक स्थिति में उद्योगों की प्रमुखता से सरकार देश का विकास करना चाहती थी। कुछ लोगों का मत यह भी था कि यदि कृषि में लगी श्रम शक्ति को उद्योग में स्थानान्तरित कर दिया जाये तो विकास की गति अत्याधिक तीव्र होगी और कृषि को यन्त्रीकरण के द्वारा आगे बढ़ाया जाए। इसी विचारधारा को आगे बढ़ाते हुये देश के आर्थिक विकास के लिए कार्य किया गया जिसके परिणाम स्वरूप अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्र प्रभावित हुए। जिसके कारण समग्र अर्थव्यवस्था का दृश्य अपेक्षा के अनुरूप सामने नहीं आया। यदि हम अर्थव्यवस्था के अलग अलग क्षेत्र में दृष्टि डालें तो हम वस्तु स्थिति को देख सकते हैं कि कौन सा क्षेत्र कितना प्रभावित हुआ। अतः अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्र हमारे विश्लेषण के महत्वपूर्ण अंग हैं।

6-B1. कृषि क्षेत्र का कम महत्व

देश की प्रथम पंचवर्षीय योजना कृषि पर आधारित थी परन्तु उसके बाद भी उसको विशेष महत्व नहीं दिया गया। औद्योगिक क्रान्ति के कारण अर्थव्यवस्था का ध्यान उसी ओर केन्द्रित रहा और कृषि विकास की दौड़ में पीछे होती चली गयी। जिसके कारण ग्रामीण एवं शहरी विकास में अन्तर स्पष्ट रूप से दिखायी देने लगे। शहरी क्षेत्र दिन-प्रतिदिन विकास के मार्ग पर आगे बढ़ते रहे। अतः ग्रामीण क्षेत्र से शहरों की ओर पलायन प्रारम्भ हो गया। अतः कृषि जिस पर पहले से ही कम ध्यान केन्द्रित था और उपेक्षित हो गया कृषि के उत्पादन में निरंतर कमी आती गयी। जोतों के आकार छोटे होते चले गये। किसान केवल जीवन यापन के द्वारा ही पैदावार करने लायक रह गया अन्य व्यवसाय न होने के कारण सीमित आय के कारण विकास पीढ़ी दर पीढ़ी कर्ज में दबते चले गये।

कृषि क्षेत्र के विकास के लिए अनुसंधान भी अपेक्षा अनुरूप नहीं हुए परिणाम उत्पादन में आर्थिक समय स्वरूप और अधिक लागत के बाद भी उत्पाद कम ही रहा। इसी प्रकार सिंचाई की सुविधा अनुकूल न होने के कारण लगभग 80 प्रतिशत खेती को मानसून के सहारे रहना पड़ा (वर्तमान समय में 70 प्रतिशत खेती) मानसून की अधिकता एवं कमी के कारण फसल के नष्ट हो जाने की पूरी सम्भावना रहती है यह भी कृषि के लिए अभिश्राप साबित हुई। सिंचाई के लिए दीर्घ व लघु योजनायें क्रियान्वित करके खेती तक पानी पहुँचाया जाता तो कृषि की प्रकृति पर निर्भरता कम होती और वर्ष में दो या तीन

फसलें ली जा सकती। परन्तु इस ओर भी कम ध्यान केन्द्रित होने के कारण आज भी छोटे सीमान्त किसान सिंचाई के आभाव में उत्पादन करने में सक्षम नहीं होते हैं। उन्नत किस्म के बीजों के अनुसंधान पर भी कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया। जो अनुसंधान हुए भी उनके सम्बन्ध में किसान को जानकारी नहीं मिल सकी और मिली भी तो बीजों की आपूर्ति नहीं हो सकी। रासायनिक उर्वरकों पर अधिक जोर दिया गया परन्तु उत्पादन पर्याप्त मात्रा में न हो पाने के कारण भी खेतों तक नहीं पहुँच सके और सरकार ने निजी क्षेत्र में उर्वरकों के उत्पादन के लिए कड़े नियम बना रखे थे इस कारण भी उत्पादन नहीं बढ़ सका और कृषि का महत्व कम ही रह गया।

इसी प्रकार कृषि के विकास के लिए जिस प्रकार गाँधी जी कहा करते थे – कि यदि हमारे गाँव व किसान समृद्ध व खुशहाल होंगे तो देश की शहरी आबादी स्वयं ही खुशहाल हो जायेगी। और देश उन्नति कर लेगा। इस प्रकार कृषि के आधार पर यदि देश की अर्थ व्यवस्था संचालित हो तो देश सन्तुलित विकास को प्राप्त कर सकेगा। कृषि क्षेत्र को कम महत्व दिये जाने के कारण सन्तुलित विकास का लक्ष्य नहीं प्राप्त कर सकते उसका ही यह कारण है कि आज किसान ऋण के कारण आत्महत्या करने को बाध्य है तथा इसको उसकी फसल का समुचित मूल्य नहीं मिल रहा है। आज भी बिचौलिये बाजार में विद्यमान है जो किसान का शोषण करते हैं। इनको हटाने के प्रयास किये गये हैं। परन्तु वे पर्याप्त नहीं हैं। इसी प्रकार ग्रामीण क्षेत्र में साहूकार, महाजन आज भी किसान को हजार रूपये का ऋण देकर

उसका जीवन पर्यन्त शोषण करते हैं और वह ऋण से मुक्त नहीं हो पाता। यह सब कृषि की उपेक्षा के कारण हुआ।

6-B2. बेरोजगारी में वृद्धि

भारतीय अर्थव्यवस्था मे यदि स्वतंत्रता के बाद से आज तक के परिदृश्य पर ध्यान केन्द्रित किया जाये तो हम पाते हैं कि बेरोजगारी की मात्रा में दिन प्रतिदिन वृद्धि हो। बेरोजगारी दूर करने के जितने भी प्रयास किये गये वे इसकी बढ़ती हुई संख्या के आगे नगण्य साबित हुये। ग्रामीण क्षेत्रों में खेती इतनी सक्षम नहीं थी जो वर्ष भर रोजगार उपलब्ध करा सके एवं नवयुवकों को शहरों की ओर आकर्षित किया जिसके कारण बेरोजगारी का दबाव शहरों में ओर धिक बढ़ गया। सार्वजनिक क्षेत्र की क्षमता इतनी अधिक नहीं थी कि अधिकतम लोगों को रोजगार दे सके और निजी क्षेत्र पर्याप्त मात्रा में नहीं थे जो पर्याप्त रोजगार उत्पन्न कर सकें। साथ ही स्वतः रोजगार की भी गुंजाइश नहीं थी। इस कारण बेरोजगारों की फौज बढ़ती चली गयी इसके साथ ही कई प्रकार की अन्य बेरोजगारियाँ भी देखने को मिली जैसे मौसमी रोजगार – इस प्रकार रोजगार के अन्तर्गत काम करने वालों को केवल कुछ समय के लिए ही (अधिकम 120 दिन) रोजगार मिलता है। शेष दिन बेरोजगार बने रहते हैं।

इसी प्रकार तकनीकी बेरोजगारी : तकनीकी शिक्षा प्राप्त लोगों की तकनीकी संस्थान कम होने के कारण रोजगार उपलब्ध नहीं हुआ तो वे काम की तलाश में बेरोजगार रह जाते हैं।

इसी प्रकार देश में सामान्य रूप से शिक्षित नवयुवकों की संख्या में निरन्तर वृद्धि के कारण बेरोजगारी का आकार दिन–प्रतिदिन बढ़ रहा है। देश के रोजगार कार्यालय इस बात के प्रमाण है कि वहाँ रोजगार की इच्छा रखने वाले लोगों के पंजीकरण की संख्या दिन – प्रतिदिन बढ़ती जा रही है और उसकी तुलना में रोजगार की उपलब्धता बहुत सीमित है। यदि हम गाँधी जी के मतानुसार– ग्रामीण क्षेत्र में सभी सुविधायें उपलब्ध कराकर उसे विकास की धारा में आगे बढ़ा दें तो ग्रामीण में ही वहाँ के लोगों के लिए पर्याप्त रोजगार उत्पन्न किया जा सकता है। परन्तु अर्थव्यवस्था में बढ़ते तकनीकी विकास के कारण मनुष्य का कार्य मशीनों द्वारा किया जाने लगा है। जहाँ खेत में कई मजदूर बैल के द्वारा काम किया करते थे वहाँ एक व्यक्ति ही सैकड़ों एकड़ भूमि पर काम कर लेता है। इस कारण भी बेरोजगारी की संख्या बढ़ी। साथ ही कार्यालय में कम्प्यूटर आदि के प्रयोग से हो जाने के कारण मानवीय श्रम बेरोजगार होता चला जा रहा है जो भारत जैसे अधिक जनसंख्या वाले देश के लिए उपर्युक्त नहीं है क्योंकि ऐसा करने से बेरोजगारी की मात्रा में निरन्तर वृद्धि होगी।

6-B3. राष्ट्रीयकरण और उद्योग

स्वतंत्रता के पश्चात् देश को समाजवादी अर्थव्यवस्था की ओर ले जाने का सरकार का संकल्प था इस लिए अधिकतम सामाजिक कल्याण को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीयकरण की नीति को अपनाया गया।

सर्वप्रथम सरकार ने वायुयान बनाने के बैंगलोर स्थित कारखाने का राष्ट्रीयकरण करके सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों की संख्या बढ़ाकर पाँच कर दी। इसके पीछे उद्देश्य था कि वायुयान जैसी महत्वपूर्ण वस्तु का निर्माण सरकार के अधिकार में ही होना चाहिये जिससे देश की सुरक्षा से कोई कोताही न हो सके।

इसी प्रकार 1949 में सरकार ने रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण किया जिससे साख नियंत्रण का एकाधिकार भी सरकार क नियंत्रण में हो सके साथ ही सरकार अपनी मौद्रिक व राजकोषीय नीति का सफलपूर्वक संचालन व नियंत्रण करके देश की अर्थव्यवस्था को नयी गति दी जा सके तथा देश को विकास के पथ पर आगे ले जाया जा सके।

निजी क्षेत्र में अनेक बैंक कार्यरत थे जो अपने कर्मचारियों का शोषण किया करते थे इसलिये सरकार ने 1968 में 14 बैंकों का राष्ट्रीयकरण करके वित्त व्यवस्था को नियमित करने तथा जनता को न्यायपूर्ण व्यवस्था के साथ–साथ काम का उचित माहौल दिलाने के लिये कम बढ़ाया। सरकार के इस प्रयास से मनमानी ब्याज दरों, काम के अनिश्चित घण्टों पर नियंत्रण कर उपयुक्त माहौल तैयार किया साथ ही इन राष्ट्रीयकृत बैंकों को भारतीय रिजर्व बैंक के नियंत्रण में रख दिया। उसके बाद 1980 में 6 बैंकों का राष्ट्रीयकरण करके देश की समस्त बैंकों को राष्ट्रीयकृत कर देश अर्थव्यवस्था पर पूर्व नियंत्रण करने का प्रयास किया।

इसीप्रकार सरकार ने स्वयं सार्वजनिक क्षेत्र में जो उद्योग स्थापित किये उनमें काम का एक स्वस्थ्य वातावरण तैयार किया परन्तु

अनेक ऐसे उद्योग भी निजी क्षेत्र में संचालित हो रहे थे जो अधिक काम लेते थे साथ ही कार्य अवधि भी अनिश्चित व अस्थायी प्रकृति की थी इस शोषण का अन्त करने के लिये सरकार ने अधिनियम पारित कर ऐसे उद्योगों को अपने अधिकार में लेकर उनका राष्ट्रीयकरण कर दिया जिससे काम करने वालों को संरक्षण मिल सका।

कुछ ऐसे उद्योग भी थे जिनमें प्रायः तालाबन्दी होती रहती थी व कुछ मालिकों द्वारा लाभ का पर्याप्त मात्रा न मिलने के कारण बन्द कर दिये गये थे व कुछ बन्द होने की कगार में थे। ऐसे उद्योगों के मालिक किसी अन्य व्यवसायों में पूँजी लगा रहे थे अतः सरकार ने ऐसे उ़द्योगों को भी अपने अधिकार में लेकर उन्हें पुनः सुचारू रूप से चलाया जिससे उसमें काम करने वाले लोगों को संरक्षण मिल सके क्योंकि वे उद्योग बन्द होने व तालाबन्दी के कारण भुखमरी की कगार पर पहुँच गये थे।

सरकार का उद्‌देश्य समाजवादी व्यवस्था स्थापित करने के साथ—साथ अधिकतम सामाजिक कल्याण को स्थापित करना था इसका कारण वह बीमार व बन्द उद्योगों को अपने अधिकार में लेकर संचालित करने का काम करती रही। इसके साथ ही सरकार यह भी चाहती थी कि सार्वजनिक क्षेत्र में अधिकतम रोजगार उत्पन्न हो।

अपने राष्ट्रीयकरण कार्यक्रम के अन्तर्गत सरकार ने ऐसे उद्योगों को भी राष्ट्रीयकृत किया था। सार्वजनिक क्षेत्र में स्थापित किया जो देश की सुरक्षा के लिये आवश्यक थे। अतः सुरक्षा से सम्बन्धित सभी साज सामान बनाने का अधिकार सरकार ने अपने पास रखा ऐसे उद्योगों को उसने स्वयं ही स्थापित किया। यदि कोई ऐसे

सामान के उत्पादन की इच्छा व्यक्त करेगा तो उसे अनुमति नहीं दी जायेगी और यदि कोई चोरी छिपे इस प्रकार के उद्योगों का संचालन कर ऐसी वस्तुओं का निर्माण करेगा तो वह दण्डनीय अपराध माना जायेगा और यदि कोई चोरी छिपे आयात करेंगे तो भी वह दण्डनीय अपराध व देशद्रोह माना जायेगा।

स्वतंत्रता से पूर्व रेल विभाग वैसे तो सरकार के ही अधिकार क्षेत्र में था परन्तु कुछ भाग व रेलें निजी क्षेत्र में भी थी। अतः उसे भी राष्ट्रीयकृत करके सार्वजनिक क्षेत्र के उपयोग को भारतीय रेल नाम से स्थापित किया। ऐसे ही जलमार्ग पर चलने वाले जहाजों की व्यवस्था को सुचारू रूप से संचालित करते हुये जहाज रानी का राष्ट्रीयकरण किया गया। माजगाँव गोदी जहाँ व्यापारिक जहाज व सेना का सामान जहाजी बेड़े, पनडुब्बी इत्यादि बनते थे उसे राष्ट्रीयकृत करके रक्षा मंत्रालय के आधीन लाया गया। उसमें तथा उसकी सभी शाखाओं में काम करने वाले कर्मचारी व अधिकारी सेना विभाग से सम्बद्ध कर दिये गये।

आधारभूत उद्योगों के प्रति सरकार अत्यन्त सजग रही उन्हें अपने ही अधिकार में रखा। कोयला खानों का राष्ट्रीयकरण कर राष्ट्रीय धरोहरों को संरक्षित व प्राकृतिक संसाधनों का मितव्ययी प्रयोग करने का लक्ष्य तय किया इसी प्रकार कपड़ा उद्योग मे सरकार ने स्वयं नेशनल टैक्सटाइल कार्पोरेशन के अन्तर्गत मीलों को स्थापित किया तो अनेक निजी क्षेत्र की मिलों का राष्ट्रीयकरण करके जता की आधारभूत आवश्यकता को पूरा करने का प्रयास किया। इसी व्यवस्था के अंतर्गत चीनी मिलों का भी नियमन किया गया जहाँ राष्ट्रीयकरण सम्भव नहीं

था वहाँ प्रबन्धन में हस्तक्षेप किया गया व कर्मचारियों के हितों के संरक्षण हेतु नियम बनाये गये।

होटल व्यवसाय में भी सरकार ने हाथ आगे बढ़ाकर पर्यटन का बढ़ावा देने के लिये होटल स्थापित किये तो खरीद कर अपने अधिकार में लिया तो कहीं–कहीं पर अपना पूँजी निजी होटलों में मिलकर भी लगायी।

उद्योगों का राष्ट्रीयकरण व अन्य व्यवसायों का राष्ट्रीयकरण करने के पीछे मुख्य उद्देश्य समाजवादी व्यवस्था की ओर आगे बढ़ना साथ ही अधिकतम सामाजिक लाभ के लक्ष्य को प्राप्त करते हुये कर्मचारियों व नागरिकों के हितों का संरक्षण करना था।

6-B4. निजी निवेश में कमी

स्वतंत्रता के पश्चात् जिस प्रकार सरकार ने राष्ट्रीयकरण की नीति को अपनाया तथा देश को समाजवाद की ओर ले जाने का संकल्प दोहराया उसके निजी क्षेत्र के निवेशकों में निराशा हुयी उन्होंने निवेश के प्रति रूचि कम दिखायी परिणाम स्वरूप निजी निवेश निरंतर कम होता गया। इसके साथ ही जो निजी निवेशक निवेश करने के लिये तैयार भी थे उन्हें लाईसेन्स व सरकार की अनुमति लेने के लिए अनेक कठिनाईयों का सामाना करना पड़ता था जिसके कारण वे निवेश से पीछे हट जाते थे। सरकार सार्वजनिक क्षेत्र में ही अधिकतम उद्योग लगाना चाहती थी इस कारण बैंक जमाओं पर ऊँची ब्याज दर देय थी इस कारण लोग बैंकों में जमा करना अधिक श्रेयकर समझते थे जिसके कारण निजी निवेश कम होने लगा साथ ही निजी क्षेत्र में

उत्पादन की मात्रा पर भी सरकार का नियंत्रण रहता था या उत्पादन की गुणवत्ता बनाये रखने के लिये सरकार उत्पादन की मात्रा पर भी नियंत्रण रखती थी। इसके साथ ही जनता को शोषण से बचाने के लिये मूल्य को भी उत्पादक मनमाफिक नहीं वसूल सकता था। इस कारण उनहें लाभ कम होत था इस कारण निवेशक निजी क्षेत्र में निवेश नहीं करना चाहते थे।

उद्योगों को ऋण देने वाले वित्तीय संस्थानों की भी कमी थी एवं बैंकों की स्थापना अधिक नहीं थी। दूर–दूर तक अधिक जनसंख्या के ऊपर एक बैंक थी जिसके कारण निजी निवेशक ऋण प्राप्त नहीं कर पाते थे जिससे वित्तीय आभाव में भी निजी निवेशक हतोत्साहित हो गये। जो निजी निवेशक अपने उद्योगों को बड़े स्तर पर संचालित कर रहे थे उन्हें अपने उत्पादों के स्वरूप (मॉडल) परिवर्तित करने की भी अनुमति नही थी जिसके कारण उत्पादक वर्ग निवेश चाहकर भी नहीं कर पाते थे जिसके कारण निजी निवेश में कमी आयी। इस प्रकार की व्यवस्था का मुख्य कारण यह था कि सरकार आवश्यक वस्तुओं को जनता को उपलब्ध कराना चाहती थी और अन्य विलासिता के साज सामान को प्रोत्साहित नहीं करना चाहती थी क्योंकि कम आय वालों में ऐसी वस्तु के प्रति प्रतिस्पर्धा न हो और समाज में अनावश्यक स्पर्धा का कोई समावेश न हो सके।

इसी कारण देश में निजी निवेश कम होता गया दूसरी ओर निवेशकों को राष्ट्रीयकरण का भी खतरा था कि सरकार कहीं उनके उद्योग का अधिग्रहण न करे इस कारण भी निजी निवेश कम हो गया।

अध्याय - ७

अध्याय - 7

वर्तमान परिदृश्य

स्वतंत्रता के समय सरकार ने जिस संकल्प के साथ देश को समाजवाद की ओर ले जाने के उद्देश्य से मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया था वह 1991 के आते–आते बिल्कुल विपरीत दिशा की ओर चल पड़ी यदि हम वर्तमान परिदृश्य पर दृष्टि डालते हैं तो देखते हैं कि अर्थव्यवस्था में अनेक परिवर्तन पाते हैं जहाँ हम सार्वजनिक उपक्रम को प्रोत्साहित करते थे वहीं अब सार्वजनिक उपक्रमों को भी निजी क्षेत्रों को सौंपा जा रहा है जहाँ देश में निजी क्षेत्र की लाइसेन्स व सरकारी अनुमति लेकर उद्योग स्थापित करने होते थे वहीं अब निजी क्षेत्र के उद्योगों को स्थापित करना अत्यन्त आसान व सरल हो गयाहै। अधिकतम उद्योग सार्वजनिक क्षेत्र के लिये संरक्षित रहा करते थे अब केवल 5 उद्योग ही सार्वजनिक क्षेत्र के लये संरक्षित रह गये हैं शेष सभी उ़द्योग निजी उद्योगों के लिये संरक्षित रह गये हैं। ऋण देने के लिये भी वित्तीय संस्थानों ने उदारनीति का पालन करना प्रारम्भ कर दिया है।

आयात निर्यात की नीतियों में भी परिवर्तन करके उदार बनाया गया है वर्तमान समय में व्यापारी सरलता से वस्तुओं का आयात व निर्यात कर सकते हैं। आयात पर लगने वाला सीमा शुल्क भी घटाकर न्यूनतम कर दिया गया है।

इसी प्रकार विश्व व्यापार संगठन के सक्रिय होने से देश का वर्तमान परिदृश्य ही बदल गया क्योंकि देश के उद्यमियों को विदेश में पूँजी निवेश करने की स्वतंत्रता दी गयी साथ ही विदेशी निवेशकों के लिये भी देश के दरवाजे खोल दिये गये और यह निवेश जहाँ पहले केवल 25% तक था वर्तमान में वह बढ़ाकर 100% तक कर दिया गया। देश की उत्पादकता में वृद्धि हुई साथ ही नये–नये उत्पाद तथा उनके विभिन्न मॉडल बाजार में देखने को मिलते हैं। विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय उत्पादों के लिये भारतीय बाजार खुले हुये हैं इसी प्रकार भारतीय उत्पादन अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में उपलब्ध हैं।

खेती का उत्पादन बढ़ा है देश खाद्यान्न के लिये आत्मनिर्भर हुआ है परन्तु उसके बाद भी गाँव व किसान उन्नत नहीं हो सके। जितनी अपेक्षा की जा रही थी। खाद्यान्नों का आयात निर्यात बेरोक–टोक किया जाता है परन्तु किसान आज भी कर्ज में दबा है। वह कर्ज के कारण आत्महत्या करने को बाध्य हो रहा है। आज विकास की इस दौड़ में ऐसे लोग भी हैं जिन्हें दो समय का भोजन उपलब्ध नहीं है अपनी दैनिक आवश्यकताओं के लिये व्यक्ति को संघर्ष करना पड़ता है। वर्तमान परिदृश्य में गाँधी जी जिस ग्रामोदय व सर्वोदय की बात करते थे वह कहीं खो गया सा लगता है। देश में संचार क्रान्ति आयी है जिसके कारण फोन व मोबााईल गाँव–गाँव पहुँच गये जिसके कारण गाँव का सम्पर्क विश्व से जुड़ा है सड़कों का सम्पर्क भी गाँवों तक पहुँचाया जा रहा है। परन्तु इस सबके बाद भी गाँव की आत्मीयता दिखाई नहीं देती। जिस ग्रामोदयों के माध्यम से सर्वोदय की योजना को लेकर गाँधी जी उत्साहित थे वह भी नहीं रह गयी। शहरीकरण की

दौड़ में गाँव का विकास पीछे छूट गया है। देश में असंतुलित विकास देखने को मिलता कहीं धन की कोई सीमा नहीं है तो कहीं धन के आभाव में दैनिक आवश्यकतायें ही पूरी नहीं हो पा रही है। अमीर और अमीर हो गये गरीब और गरीब होते गये। धन और अवसरों का असमान वितरण है। पक्षपात व भ्रष्टाचार चरम पर है अन्त्योदय के कारण प्रतिभायें कुंठित हो रही है या पलायन करने को बाध्य हैं।

देश का वर्तमान परिदृश्य तत्कालिक दृश्य से सर्वथा भिन्न है। गाँधी जी का संकल्प दूर–दूर तक दिखाई नहीं देता। कहाँ हम समाजवाद की ओर अग्रसर थे और उसके बिल्कुल विपरीत पूँजीवादी की ओर धीरे–धीरे चल दिये हैं। तथा 10,000 कृषकों की आत्महत्या को जिसका कारण ऋण था और सरकार उन्हें किसानों के उत्पाद के विपणन के लिये तो प्रयास सार्थक ढंग से कर नहीं रही बल्कि ऋण जाल में और ढुबो रही है। इसी प्रकार विशेष आर्थिक क्षेत्र के निर्माण से किसानों, फुटकर विक्रेताओं और रोजगार पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। आगे चल कर बेरोजगारी और बढ़ेगी जिसका हमारी अर्थव्यवस्था पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा।

7-A. उदारीकरण व वैश्वीकरण

वर्तमान अर्थव्यवस्था में सरकार ने देश को अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा के योग्य बनाने व उन्नति का मार्ग प्रशस्त करने के लिये अपनी आर्थिक विचार को बदला और हम समाजवाद व सार्वजनिक उपक्रमों को छोड़कर पूँजीवाद व निजीकरण की ओर बढ़ रहे हैं। 1991 से देश में उदारीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हुयी जो समय के साथ–साथ अपने स्वरूप को आधुनिकतम् करते हुये तीव्र होती गयी।

नयी आर्थिक नीति में भारतीय अर्थव्यवस्था उदारीकरण के साथ जुड़ गयी। उदारीकरण से तात्पर्य है कि उदारीकरण वह प्रक्रिया है जिसमें देश के शासनतन्त्र द्वारा देश के आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करने के लिये अपनाये जा रहे लाइसेंस, नियंत्रण, कोटा, प्रशुल्क आदि प्रशासकीय अवरोधों को कम किया जाता है व धीरे–धीरे न्यूनतम व समाप्त किया जाता है। उदारीकरण का पूरक अथवा सहयोगी निजीकरण कहा जाता है। इसी के अन्तर्गत सार्वजनिक क्षेत्रों की बढ़ती हुई अक्षमता व बढ़ते हुये घाटे को देखते हुए उन्हें निजी हाथों में सौंपने का निर्णय किया गया जिसके अन्तर्गत विनिवेश की प्रक्रिया अपनाते हुये खुली बोली लगाकर निजी क्षेत्रों को बेच दिया गया व सरकार ने अपने हाथ खींच लिये। सार्वजनिक उपक्रमों की कार्यक्षमता व क्षेत्र सीमित करके निजी क्षेत्रों को प्रोत्साहित किया गया। उदारवादी लाईसेन्स नीति अपनाकर उन्हें कार्य करने हेतु विस्तृत सुविधायें प्रदान की गयी। निजी निगमों व बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को आकर्षक सुविधायें देकर इन कार्य क्षेत्रों को प्रोत्साहित किया गया।

नयी आर्थिक नीतियों में निजी करण को लोक उपक्रमों की कमियों को दूर करने वाला प्रभावी उपकरण माना गया इस प्रकार सार्वजनिक उपक्रमों का पूर्ण अथवा आंशिक रूप से विक्रय किया जाना निजीकरण के रूप में देखा गया।

नयी औद्योगिक नीति 24 जुलाई 1991 के अन्तर्गत व्यापक परिवर्तन किये गये उसे और उदारवादी बनाया गया व उसे "उदारवादी औद्योगिक क्रान्ति" का स्वरूप प्रदान किया गया। उदारीकरण की सफलता के लिये जिस निजीकरण को प्रोत्साहित किया गया वह संकुचित अर्थों में सार्वजनिक स्वामित्व वाली कम्पनियों का निजी हाथों में स्तान्तरण माना गया परन्तु व्यापक रूप से ऐसा भी देखा गया जबकि निजी स्वामित्व के अतिरिक्त या स्वामित्व में परिवर्तन किये बिना भी सार्वजनिक उद्यमों में निजी प्रबन्ध एवं नियंत्रण को प्रारम्भ करने से रखा गया इस कारण निजीकरण को विस्तृत अर्थों में ही स्वीकार करना व उसका पालन करना ही श्रेयकर माना गया। जैसे चीन की कृषि में सम्पत्ति अधिकारों के हस्तान्तरण का उदाहरण देखा गया। निजीकरण की सफलता के लिये तीन प्रकार के उपाय किये गये।

A. स्वामित्व सम्बन्धी उपाय -

जिन उपायों से सार्वजनिक उद्यमों के स्वामित्व का हस्तान्तरण पूर्ण या आंशिक रूप से किया जाये। इसके अन्तर्गत भी चार उपाय किये गये।

(i) पूर्ण अराष्ट्रीयकरण - किसी सार्वजनिक उद्यम के स्वामित्व को निजीक्षेत्र को पूर्णतः हस्तांतरण किया गया।

(ii) साझा उद्यम - इसके अन्तर्गत आंशिक रूप से उद्यम को निजी क्षेत्र में हस्तान्तरित किया गया।

(iii) परिसमापन - इसके अन्तर्गत परिसम्पत्तियों का विक्रय करना जो उसका प्रयोग उसी उद्देश्य व किसी अन्य उद्देश्य के लिये अपनी इच्छानुसार उपयोग करें।

(iv) प्रबन्ध क्रम - यह भी अराष्ट्रीयकरण का एक रूप है इसमें कर्मचारिं को परिसम्पत्तियों का विक्रय करना है जिससे उद्यम को चलाने के लिये सहकारी समिति बना सके। इस प्रकार कर्मचारी व मजदूर लाभाँश के अधिकारी भी बन जाते हैं।

B. संगठनातमक उपाय -

इसके अन्तर्गत राज्यकीय नियंत्रण को सीमित करने के लिये तीन उपाय किये गये।

(i) नियंत्रण कम्पनी - इसके अन्तर्गत ढाँचे का विकास इस प्रकार किया जाता है कि सरकार अपना नियंत्रण व हस्तकक्षेप उच्च स्तर के निर्णयों तक सीमित कर देती है इसके अन्तर्गत काम करने वाली कम्पनियों को बाजार शक्तियों की परिसीमा में निर्णयों को करने में पर्याप्त स्वतंत्रता देती है जैसे – भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड।

(ii) पट्टे पर देना - सार्वजनिक उद्यम का स्वामित्व अपने पास रखते हुए निजी बोली लगाने वाले को एक निश्चित समय के लिये प्रयोग करने का अधिकार दिया जाता है। जैसे चीन की सरकार ने सम्पत्ति दायित्व प्रणाली को अपनाया जिसके अन्तर्गत निविदा कार

पाँच वर्ष के लिए उद्यम का कार्य संचालन बनता है तथा एक प्रोनोंट सरकार को देता है कि वह नियमों का पालन करेगा।

(iii) पुनर्गठन - सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों को बाजार अनुशासन के अनुरूप बनाने के लिये उनका दो प्रकार से पुर्नगठन किया जाये वित्तीय पुर्नगठन – इसके अन्तर्गत संग्रहीत हानि को समाप्त कर दिया जाये और पूँजी संरचना को ऋण का इक्विटी अनुपात के साथ युक्ति मुक्त बनाया जाये।

(iv) बुनियादी पुनर्गठन - करने के लिए व्यक्तिक क्रियाओं को पुनः परिभाषित करके भविष्य के लिये कुछ क्रियाओं को छोड़ दिया जाये जिससे वह अनुसंगगियों का लघु स्तर की इकाइयों द्वारा अपना ली जाये।

C. कार्य संचालन सम्बन्धी उपाय -

इसके अन्तर्गत निजीकरण व नामी किया गया हो इस प्रक्रिया के अन्तर्गत उद्यम को पुनः जीवित करना, कर्मचारियों को निर्णय सम्बन्धित स्वतंत्रता देना जिससे कर्मचारियों को प्रोत्साहन मिले लक्ष्य को ठेके की प्रणाली द्वारा प्राप्त करना।

भारत में उदारीकरण व निजीकरण की लहर 80 के दशक में प्रारम्भ हुई नइ औद्योगिक नीति को औद्योगिक क्रान्ति के रूप में देखा गया। समय–सयम पर इसकी आलोचना की गयी परन्तु धीरे धीरे इस ओर अग्रसारित होते हुये अनेक कम्पनियों का निजीकरण कर लिया गया जिसके लिये सरकार को तीव्र आलोचना का सामना भी करना पड़ा। जैसे– भारत, इल्मोनियम कम्पनी बालकों जो एक नाम कमाने

वाली कम्पनी थी उसे 550 करोड़ में बेच दिया गया जिसके लिये वह अप्रैल 2001 को श्री दत्तोपन्त ठेगड़ी ने सरकार की विनिवेश नीति की आलोचना की और कहाकि मॉर्डन फ्रूड को कोड़ी के दाम बेच दिया गया व बालकों का सौदा एक धोखाधड़ी है सरकार ने अण्डे देने वाली मुर्गी को मार दिया है।

वैशवीकरण वह प्रक्रिया है जिसमें विश्व की विभिन्न अर्थ व्यवस्थाओं का समन्वय किया जाता है जिससे वस्तुओं व सेवाओं, पूँजी और रकम या मानवीय पूँजी का निर्वाद रूप से प्रवाह हो सके इसके चार अंग हैं : –

1. व्यापार अवरोधकों को कम करना जिससे वस्तुओं एव सेवाओं का बे–रोकटोक आदान प्रदान हो सके।
2. ऐसी परिस्थिति कायम करना जिससे विभिन्न राज्यों मे पूँजी स्वतंत्र प्रभाव हो सके।
3. ऐसा वातवरण तैयार करना जिससे विश्व के विभिन्न देशों में श्रम का निर्वाद प्रभाव हो सके।
4. ऐसा वातावरण बनाना जिससे तकनीकी का स्वतंत्र प्रभाव हो सके।

भारत में वैश्वीकरण के पक्ष में तथा विपक्ष में तर्क दिये गये इसके समर्थन में कहा गया कि वैश्वीकरण एक रोमांचक शब्द है यह इच्छा प्रकट कराता है कि विभिन्न राष्ट्रों को विश्व व्यापार संगठन के ढाँचे के आधीन एकीकृत कर देना चाहिए। परन्तु गम्भीरतापूर्वक, विचार करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि यह तुलनात्मक लागत–लाभ

के सिद्धान्त का आधुनिक वितरण ही है। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों द्वारा दिया गया है। इसके समर्थन में कुछ तर्क दिये गये। जैसे—

1. प्रत्यक्ष विदेशी निवेश बढ़ेगा जिससे विकासशील देश बिना विदेशी ऋण के अपने विकास के लिए पूँजी लगा सकेंगे।

2. वैश्वीकरण विकासशील देशों को विकसित देशों को उन्नत देशों द्वारा विकसित की गयी तकनीक के प्रयोग में सहायता प्रदान करता है।

3. वैश्वीकरण विकासशील देशों को विकसित देशों से अपने उपज का निर्यात करने की पहुँच का विस्तार करेगा।

4. वैश्वीकरण से ज्ञान का तीव्रता से प्रसार होगा। और इसके परिणामस्वरूप विकासशील देश अपने उत्पादन और उत्पादिता के स्तर को उन्नत कर सकते हैं।

5. वैश्वीकरण से परिवहन एवं संचार की लागत कम हो जाती है इससे टैरिफ भी कम हो जाता है। देश में संचार सुविधाओं का विस्तार आसान हो जाता है।

वैश्वीकरण को विकास के लिये तकनीकी प्रगति एवं उत्पादिता में वृद्धि के लिये इंजन का काम करेगा। इसके साथ ही इससे रोजगार में वृद्धि होगी और आधुनिकीकरण को बल मिलेगा।

वैश्वीकरण की कड़ी आलोचना नोबल पुरस्कार विजेता और विश्व बैंक प्रमुख अर्थशास्त्री जोल्वेफ स्टिग्लिटज ने अपनी पुस्तक "वैश्वीकरण और इसकी निराशायें" में किया। वैश्वीकरण के

सामाजिक आयाम पर विश्व आयोग ने भी विश्व भर में वैश्वीकरण के अनुभव पर विचार किया और नई चौकाने वाले तथ्य प्रस्तुत किये।

विश्व आयोग ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि "वैश्वीकरा का मौजूदा मार्ग बदलना होगा इससे बहुत थोड़े लोगों को लाभ होगा। हम वैश्वीकरण को मानवीय कल्याण और स्वतंत्रता के विस्तार का साधन बनाना चाहते हैं और स्थानीय समुदायों के पास जहाँ वे निवास करते हैं, लोकतंत्र और विकास लाना चाहते हैं।"

भारतीय अर्थव्यवस्था पर भी वैश्वीकरण का व्यापक प्रभाव देखने को मिला। व्यापार के अंतर्गत वैश्वीकरण का मुख्य उद्देश्य वसतुओं और सेवाओं के व्यापार का विसतार करना है।" परन्तु विश्व आयोग ने कहा कि "यह व्यापार विस्तार सभी देशों में समान रूप से नहीं हुआ और इसका अधिकतर भाग औद्योगिक देशों और विकासशील देशों के समूहों को प्राप्त हुआ। भारत के विश्व वस्तु निर्यात में 9.1% की वृद्धि हुई। वैश्वीकरण के परिणाम स्वरूप अपनी निर्यात वृद्धि दर बढ़ाने में लाभ प्राप्त हुआ परन्तु विश्व वस्तु व्यापार में भारत के भाग में नाम मात्र की वृद्धि हुई। सेवा क्षेत्र निर्यात में भारत का निष्पादन सापेक्षतः कहीं बेहतर था। यह 4.6 अरब डालर 1990 में था जो 2003 में बढ़कर 37.7 अरब डालर हो गया।

भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश व पोर्ट फोलियो निवेश भी बढा है। भारत सरकार ने प्रत्यक्ष विदेश निवेश को बढ़ाने के लिये अनेक आकर्षक उपाय किये। वैश्वीकरण के दौर में देश की रोजगार की स्थिति और खराब हो गयी 1983–84 में रोजगार वृद्धि दर 2.04% थी वह 1994–2000 के दौरान 0.98% हो गयी। इसका कारण था कृषि

रोजगार में नकारात्मक वृद्धि थी। इसी के साथ–साथ सामुदायिक सामजिक एवं वैक्तिक सेवाओं की वृद्धिदर में तीव्र गिरावट आयी यह 1994–2000 में 0.55% थी जो 1993–94 में 2.9% थी। असमानता की दर में कमी आयी परन्तु सापेक्षित दर में इसमें वृद्धि हुई। बढ़ती हुई असमानता का मुख्य कारण देश में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों व निगमों द्वारा बहुत ऊँचे वेतन और अन्य भत्ते देना है। सस्ते आयात के कारण बहुत से छोटे आकार के कमजोर उद्यम बन्द हो गये इन्होंने अनौपचारिक अर्थव्यवस्था एवं कृषि पर दुष्प्रभाव डाला। भारतीय अर्थव्यवस्था में वैश्वीकरण का व्यापक सकारात्मक व नकारात्मक दोनों प्रभाव देखने को मिले।

7-B. निजी निवेश का महत्व

वर्तमान समय में भारतीय अर्थव्यवस्था जहाँ एक ओर सार्वजनिक निवेश को ही प्राथमिकता दी जाती थी परन्तु वर्तमान में निजी निवेश को ही प्राथमिकता दी जा रही है और सार्वजनिक निवेश होत्साहित ही नहीं किया जा रहा बल्कि विनिवेश की कार्य योजना का क्रियान्वयन किया जा रहा है। स्वतंत्रता से लेकर 1991 से पूर्व भी निजी निवेश की प्रक्रिया संचालित होती थी परन्तु वह नियंत्रण के अन्तर्गत होती है। निजी क्षेत्र के निवेशकों को प्रोत्साहित करने के लिये प्रान्त स्तर से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक के वित्तीय संस्थान कार्य रहे हैं जो आज भी हैं ये सभी सरकारी संस्थान है। निजी निवेश कुछ निश्चित उद्यमों तक ही सीमित था क्योंकि अधिकतम् उद्योग सार्वजनिक क्षेत्र के लिये संरक्षित रखे गये थे जिन उद्यमों में निजी निवेशक निवेश करना भी चाहते थे उन्हें भी लाइसेन्स, कोटा परमिट व अनुमति प्राप्त करनी पड़ती थी। इसी प्रकार अर्थव्यवस्था मिश्रित होतेहुए भी समाजवाद की ओर आकर्षित थी इसी कारण निजी निवेश का विशेष महत्व नहीं था परन्तु 1991 के आते–आते यह देखा गया कि अर्थव्यवस्था मे वर्ष दर वर्ष घाटा बढ़ता जा रहा है घाटे में चलने वाले उद्यमों को संचालित करना कठिन हो रहा था और विश्व में आर्थिक परिस्थितियाँ बदल रही थी इसी कारण 1991 से भारतीय अर्थव्यवस्था को एक नई दिशा की ओर ले जाने के प्रयास प्रारम्भ हुये और उदारीकरण के साथ–साथ निजीकरण का दौर प्रारमभ हुआ और निजी निवेश का महत्व बढ़ गया। निजी निवेशकों के लिये उद्यमों के दरवाजे खोल दिये गये चाहे वे देश अथवा विदेश के निवेश हो। धीरे–धीरे नीतियों को उदार बनाकर

अधिकतम 49% से बढ़ाकर 100% तक निवेश को बढ़ा दिया गया। 1995 से विश्व व्यापार संगठन के सक्रिय हो जाने से निजी निवेश का महत्व और बढ़ गया। 5 उद्यागों को छोड़कर सभी उद्योगों के निवेश के लिये खुला छोड़ दिया गया। कुटीर, लघु एवं बड़े उद्योगों के निवेश की सीमा में वृद्धि कर दी गयी देश में रोजगार के स्तर को बढ़ाने के लिए भी ऐसी योजनाओं को क्रियान्वित किया गया जिससे सरकारी ऋण के साथ–साथ निजी निवेश को प्रोत्साहित करने का प्रयत्न किया गया। सार्वजनिक क्षेत्र में रोजगार बढ़ाने की क्षमता अधिक न होने के कारण बेरोजगारी का दबाव निरंतर बढ़ने के कारण स्वतः रोजगार को प्रोत्साहित किया जा रहा है जिससे निजी निवेश को बढ़ाया जा सके।

देश आधारभूत ढाँचे को मजबूत बनाने के लिए उसके शेयर खुले बाजार में बेचकर जनता की पूँजी की सहभागिता बढ़ायी गयी। जब विनिवेश की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई तो निजी क्षेत्र पूँजी निवेश का महत्व और भी बढ़ गया साथ ही निजी क्षेत्र के विदेश निवेश भी निवेश करने लगे और हमारे देश के निवेशक विदेश में जाकर निजी पूँजी निवेश करने लगे। जब देश में निजी पूँजी का निवेश बढ़ा तो साथ ही विभिन्न प्रकार उद्यमों में उत्पादों में विविधता आना प्रारम्भ हो गया और उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन में प्रतिस्पर्धा बढ़ने से उच्च स्तर की वस्तुयें बाजार में उपभोक्ताओं को उपलब्ध होने लगी और वह भी नियंत्रित या सामान्य मूल्य पर।

वर्तमान समय में देश में उन्नति का जो वातावरण दिखायी देता है, व विकास की जो गति दिखती है वह निजी पूँजी के निवेश के कारण ही सम्भव है। भविष्य में निजी पूँजी के और निवेश होने की प्रबल सम्भावना है जिससे उसका महत्व और बढ़ेगा।

7-C. बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का प्रवेश व प्रतिस्पर्धा

भारत में अनेक विदेशी कम्पनियाँ पूर्व से ही काम कर रही थी परन्तु उनकी पूँजी नियत्रित मात्रा में ही रहा करती थी परन्तु उदारीकरण व वैश्वीकरण के दौर के प्रारम्भ हो जाने के पश्चात् सम्पूर्ण विश्व की अर्थव्यवस्था को एक ग्लोबल व्यवस्था के रूप में स्वीकार किया गया जिसके परिणाम स्वरूप अनेक ऐसी कम्पनियों का भारत में आगमन सुगम हो गया जो पूर्व से ही विश्व के अनेक देशों में अपने उत्पादन कार्य कर रही है। इन कम्पनियों के आगमन से देश में काम करने वाली कम्पनियों के सामने अपने उत्पादन को अर्न्तराष्ट्रीय स्तर का करने व गुणवत्ता में सुधार करने की चुनौती सामने आयी। ऐसे में जो उत्पादक साहसी थे उन्होंने अपने स्वरूप में सुधार किया व उत्पादन को विश्वस्तर का बनाकर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को कड़ी चुनौती दी व विदेश बाजार पर अधिकार बनाया। परन्तु कुछ ऐसे उत्पादक भी हमारे देश मे थे जिन्होंने पूँजी के आभाव में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आगे सम्पूर्ण कर दिये और अपनी कम्पनी को उन्हें या तो बेच दिया या उनके साथ व्यापारिक समझौता कर लिया जैसे – थम्सअप को पेप्सी ने खरीद लिया, गोल्ड स्पाट को कोका कोला ने खरीदा। इसका परिणाम यह हुआ कि इन कम्पनियों को बनाबनाया बाजार मिला वे अपने उत्पादों को सरलता से ग्राहकों तक पहुँचाने में सफल हुये और ग्राहक इस परिवर्तन को समझ भी नहीं सके क्योंकि इन कम्पनियों ने उत्पाद तो अपना भरा परन्तु नाम नहीं बदला। समय के साथ–साथ विश्व व्यापार संगठन के समझौतों के अनुरूप देश में संवैधानिक परिवर्तन

किये गये जिसके कारण बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का देश में प्रवेश और सरल हो गया। परिणाम स्वरूप विधि क्षेत्र में इन बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का प्रवेश हुआ इससे उत्पादकों ने अपने उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार के लिए आधुनिक तकनीकि को अपनाया व प्रबन्धकीय परिवर्तन करके विश्व मानक को चुनौती मिली व देशी कम्पनी उत्पादों का स्तर सुधरा कुछ देशी कम्पनी जो परिवर्तन करने में समक्ष नहीं हुये वे बन्द होकर प्रतिस्पर्धा से बाहर हो गयी। देश में एक बड़ा उपभोक्ता बाजार होने के कारण विश्व की अनेक कम्पनियों का ध्यान भारत की ओर आकर्षित हुआ है। चीन में भी उपभोक्ता बाजार अत्यन्त विशाल है परन्तु वहाँ की अर्थव्यवस्था में खुलापन न होने के कारण व केन्द्रीय कार्यव्यवस्था होने के कारण बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने उस ओर ध्यान अधिक नहीं दिया।

भारत में धीरे–धीरे उदार नीतियों के क्रियान्वयन के कारण विविध क्षेत्रों में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का प्रवेश हुआ है व अनेक क्षेत्रों में देशी कम्पनियों के साथ समझौता कर संयुक्त उपक्रम भी स्थापित हुये। जैसे– शीतल पेय के क्षेत्र में पेप्सी, कोका कोला, स्प्राइट इत्यादि कम्पनियों का प्रवेश हुआ। कपड़ा उद्योग के क्षेत्र में अनेक कम्पनियाँ आयी जैसे – रीड एण्ड टेलर जैन्सपीटर

इससे देश की कपड़ा उत्पादक कम्पनियों ने भी विश्व स्तर का उत्पादन किया जिससे विश्व बाजार में अपने उत्पादन की छाप स्थापित की जैसे – विमल, रेमण्ड्स, बाम्बे डाईंग, मुफतलाल, ग्वालियर रेन, जीयाजी शूटिंग इत्यादि।

इसी प्रकार वित्तीय व बैंकिंग के क्षेत्र में भी अनेक कम्पनियाँ आयी जिन्होंने वित्तीय व्यवस्था में एक नई गतिविधि का संचार हुआ

और हमारे देश की बैंकों के भी अपनी कार्य प्रणाली को सुचारू रूप से व्यवस्थित कर प्रतिस्पर्धा को स्वीकार किा। इस क्षेत्र में ICICI बैंक, HDFC बैंक, जैसी वित्तीय बैंकों की स्थापना से धन का विश्व में संचालन सुगम व सरल हो गया। ऑटोमोबाईल के क्षेत्र में हॉण्डा, यामा, सुजुकी, आईकॉन, फोर्ड, ओपल, शैवरलैट जैसी कम्पनियों के प्रवेश से ऑटोमोबाईल के बाजार का विस्तार हुआ साथ ही देश की कम्पनियों जैसे– महेन्द्रा, टाटा मारूति ने अपने उत्पादन का सुधार कर विश्व स्तर का बना कड़ी चुनौती दी।

उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन के क्षेत्र में भी अनेक कम्पनियों के आगमन से उपभोक्ताओं को उच्च स्तर के आगमन से उपभोक्ताओं को उच्चस्तर का माल मिलने लगा।

विज्ञापन के क्षेत्र में भी अनेक बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आगमन से नये नये मॉडल काम पास के तो दूसरी ओर विज्ञापन की नयी तकनीकि भी हमारे विज्ञापन निर्माता सीख सकें। इसी प्रकार चमड़े के उत्पादन के लिये रेडचीफ जेसी अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनियों के आगमन से हमारे हमारें यहाँ की लखनी, कैम्पस, जैसी कम्पनियों को भी विश्व बाजार में प्रवेश का अवसर मिला जबकि बाटा अपने देश में पूर्व से ही विद्यमान है।

वर्तमान समय में प्रकाशन के क्षेत्र में तथा वैधिक (कानूनी) सेवाओं के क्षेत्र में भी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के प्रवेश हेतु प्रयास हो रहा है परन्तु इसका प्रबल विरोध भी किया जा रहा है।

अनेक बहुराष्ट्रीय कम्पनी यहाँ आकर उत्पादन करती है वह यहाँ एवं विश्व के अनेक देशों में बेचती है तो कुछ कम्पनियाँ केवल

अपने उत्पादों को एसैम्बिल करती हे व बने बनाये पार्ट अपने देश से लाती है और एसैम्बिल कर विश्व बाजार में बेचती हैं। कुछ ऐसी कम्पनियाँ है जो केवल बना बनाया माल लाकर यहाँ के बाजार में बेचती है ओर उत्पादन अपने देश में ही करती है। क्योंकि उनको अपने ही देश में उत्पादन करना सस्ता पड़ता है क्योंकि वहाँ मजदूरी कम होने के कारण उत्पादन लागत कम रहती है।

बहुराष्ट्रीय कम्पनियों में अनेक ऐसी है जो अपने उत्पादन व सेवाओं की मार्केटिंग भारत में अपने सेन्टर खोलकर कराती है जिन्हें काल सेन्टर कहा जाता है। इन मार्केटिंग करने वाली कम्पनियों के अपने देश की अपेक्षा यहाँ कर्मचारी सस्ते मिलते हैं जिसके कारण यहाँ से मार्केटिंग सरल हो जाती है।

बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के प्रवेश से तीव्र प्रतिस्पधा्र का जन्म हुआ जिसके कारण यहाँ पर विकास दिखाई देता है एव उत्पादन की गुणवत्ता में सुधार होने से उपभोक्ताओं को उच्चस्तर का सामान उपभोग हेतु प्राप्त होने लगा हैं जैसे – इलैक्ट्रानिक व तकनीकि क्षेत्र में वर्लफूल, हिटाची, सोनी, सेमसन, एलजी ऐसी कम्पनियों का प्रवेश यहाँ बाजारीकरण के नये स्वरूप को लाया है। इसी प्रकार उपभोक्ता पदार्थों में कॉलगेट, क्लोजअप, सिवाका, हिन्दुस्तान लीवर, कैमी जैसी कम्पनियों के आने से यहाँ का उत्पादन भी गुणात्मक रूप से सुधरा एवं बाजार का विस्तार हुआ है।

बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आगमन से देश में रोजगार में वृद्धि हुई परन्तु कुछ सेवागत क्षेत्र में ही इस कारण समग्र रूप से देखें तो इन कम्पनियों के आगमन से बेरोजगारी में वृद्धि हुई है व असमानता

बड़ी है, साथ ही देश के लघु एवं कुटीर उद्योग नष्ट प्रायः: हो गये साथ ही कुछ उ़द्योग बन्द हो गये कुछ बन्द होने की कगार में हैं। इसके साथ देश की सभ्यता व सांकृतिक विरासत को भी धक्का पहुँचा।

हमारे देश की अनेक कम्पनियों ने भी अपने स्तर को बहुराष्ट्रीय किया है व वे भी विभिन्न देशों में स्थापित हैं या सेवायें दे रही है। जैसे– आदित्य बिड़ला ग्रुप ने – फ्राँस की विश्व की सबसे बड़ी एल्युमिनियम कम्पनी खरीद कर तहलका मचा दिया तो टाटा ने इंग्लैण्ड की विश्व विख्यात टेटली चाय कम्पनी खरीदकर विश्व बाजार में अपनी उपस्थिति दर्ज करायी। यह अवश्य कहा जा सकता है कि विश्व बाजार में हमारे उत्पादों को भी अवसर मिला है तो बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आगमन से हमारा उत्पादन सुधरा व प्रतिस्पर्धा से उच्चस्तर का उत्पादन सामने आया है। इस प्रकार देश में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आगमन का मिला जुला प्रभाव देखने को मिला है व विकासशील देशों को भी उन्नति करने का अवसर मिला है तो अल्प विकसित राष्ट्र भी विकास की राह पर आगे बढ़ने लगे हैं।

भारत जैसे देश ने भी संरक्षण की नीति को बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आगमन व विश्व बाजार में हिस्सेदारी बढ़ाने हेतु समाप्त कर दिया है।

अध्याय - ८
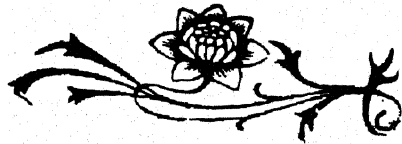
अध्याय - 8

गाँधी जी के आर्थिक विचारों की सार्थकता

महात्मा गाँधी के आर्थिक विचार की सार्थकता आज भी है यदि उन विचारों पर जीवन को चलाया जाय तो हम सुख से जीवन यापन कर सकते हैं। अर्थात् – "जियो और जीने दो" का सिद्धान्त सार्थक सिद्ध हो सकता है। आज उसी सिद्धान्त को मान कर ही विश्व इस शलाकार प्रतियोगिता से बच सकता है। जीवन में उतना ही लेना जितना आवश्यक है। जीवन यापन त्याग और अपरिग्रह के आधार पर करके ही सभी लोगों को सुखी कर सकते हैं। दूसरी ओर प्रकृति के समस्त संसाधन सीमित मात्रा में होने के कारण भ हमे सीमित प्रयोग ही करना होगा। अन्यथा संसार में सभी की आवश्यकतायें पूरी नहीं हो सकती न ही भविष्य में शान्ति स्थापित की जा सकती है। अतः गाँधी जी का सिद्धान्त का पालन करना आवश्यक है। अब चाहे उसे हम प्रशन्नतापूर्वक करें या मजबूरी में करें।

वर्तमान समय में युवा पीढ़ी इस विचारधारा से सहमत नहीं लगती। गाँधी जी के विचारों की सार्थकता होते हुये भी उसे स्वीकारने को तैयार नहीं उसे चार्वाक का दर्शन ही प्रिय लगता प्रतीत होता है।

यावत् जीवेत् सुखम् जीवेत, ऋणम् कृत्ता घतम् पीवेत

युवा पीढ़ी ने शारीरिक भोग विलास, शारीरिक सुख को ही प्रमुख मान लिया है। उसका कारण है कि हम हमारे जीवन दर्शन को प्रस्तुत नहीं कर पा रहे हैं। और वह अपरिग्रह के सिद्धान्त के विपरीत

आचरण कर रही है। और वर्तमान संचार साधन के माध्यम से पश्चिमी जीवन दर्शन का प्रचार–प्रसार खूब हो रहा है जिसके कारण मितव्ययी जीवन की बात किसी को नहीं सुहाती सभी अधिकतम उपभोग की ओर बढ़ रहे हैं। आर्थिक युग का प्रादुर्भाव हो गया है। ऐसा लगता है कि एडम स्मिथ ने जो कहा था कि "मनुष्य एक आर्थिक प्राणी है वह धन के लिये काम करता है" की उक्त सत्य लगने लगी है। क्योंकि समाज में उपभोगवाद बढ़ रहा है। सामाजिक जीवन एक दूसरे के प्रति संवेदनहीनता की ओर बढ़ रहा है। हमारा उद्देश्य अधिक से अधिक धन अर्जन कर सबसे अधिक धनी बनने का है।

हम दुनिया को अर्थशास्त्र की श्रेष्ठ परिभाषा "साई उतना दीजिये जाने कुटुम्ब समाये, मैं भी भूखा न रहू अतिथि न भूखा जाये" देने से समर्थ थे क्योंकि हमारा उद्देश्य आर्थिक दृष्टि से स्वयं के लिये अधिकतम न होकर न्यूनतम था और सामाजिक कल्याण के लिये अधिकतम् या आज विचार विपरीत है स्वयं के लिये अधिकतम समाज के लिये न्यूनतम। ऐसी परिस्थिति में हमारा समाज सत्य को देख नहीं पा रहा है गाँधी जी का आर्थिक विचार जो दीर्घजीवन सुखमय व्यतीत करने की गारन्टी देता है उसे हम भूल रहे हैं। जानकर भी अन्जान बने हैं। सिद्धान्त प्रसांगिक होते हुए भी व्यवहारिक व अप्रसांगिक हो गया है गाँधी दर्शन।

8-A. अर्थव्यवस्था में व्याप्त विशेषतायें

भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था होने के कारण इसमें अनेक विशेषतायें समायी हुई है। आजादी के 60 वर्षों बाद देश की अर्थव्यवस्था की दिशा बदली अवश्य है परन्तु मूलरूप से आज भी ग्रामीण या कृषि आधारित ही है। क्योंकि आज भी 67% लोग प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े है जिसका आज 32.8% का योगदान राष्ट्रीय आय में है जो अन्य किसी भी क्षेत्र में सर्वाधिक है। कृषि उद्योग को कच्चा माल की आपर्ति कर उद्योग की उन्नति का मार्ग प्रशस्त करती है। ग्रामीण जीवन आज भी सादा, सरल व सादगी पूर्ण है।

यदि हम अर्थव्यवस्था की विशेषताओं को विस्तार से देखते हैं तो उसमें दो प्रकार की विशेषतायें हैं परम्परागत एवं आधुनिक। परम्परागत विशेषताओं में मुख्य रूप से कुछ विशेषतायें हैं जैसे– परम्परागत समाज, कृषि पर आधारित ग्रामीण जीवन, ऋण के बोझ से किसान सदैव दबा रहात है, जोत की छोटी सीमा या जोत का छोटा आकार, परम्परागत कृषि के साधन उन्नत किस्म के बीज एवं उर्वरकों की कम आपूर्ति, निम्न प्रति व्यक्ति आय, जनसंख्या का बढ़ता हुआ दबाव, बेरोजगारों की बढ़ी फौज व अल्प रोजगार, मौसमी रोजगार व तकनीकी बेरोजगारी की समस्या, पूँजी का आभाव जिसके कारण विकास की दर में कमी, सम्पत्ति व साधनों का असमान विवरण, अकुशल श्रम शक्ति, जीवनस्तर निम्न है। इस परम्परागत विशेषताओं के अतिरिक्त यदि हम आधुनिक विशेषतायें या अर्थव्यवस्था का बदला हुआ स्वरूप देखते हैं तो एक अलग प्रकार का चित्र उभरकर सामने

आता है जैसे – आधारभूत संरचना का विकास, परिवहन एवं संचार सुविधाओं का विस्तार एवं विकास, खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता, तकनीकी शिक्षित लोगों में वृद्धि, वैकल्पिक ऊर्जा के साधनों का विकास, उन्नत होता जीवनस्तर, रोजगार में वृद्धि, परमाणु कार्यक्रम में दक्षता व उसका उपयोग सैन्य व विकास के कार्यक्रमों में सफल प्रयोग, वित्तीय संस्थाओं का विकास व स्थापना, किसानों की उपज का वास्तविक मूल्य दिलाने हेतु नियमित मण्डियों की स्थापना व माध्यमों से मुक्ति, ऋण दिलाने हेतु बैंकों की स्थापना व उदारनीति का प्रयोग व किसानों को सूदखोर, साहूकार, महाजनों के चंगुल से मुक्ति दिलाना।

भारत सरकार के प्रयोगों से भारतीय अर्थव्यवस्था के स्वरूप में परिवर्तन आया है परन्तु जब हम इसका गहराई से अध्ययन करते हैं तो देखते हैं कि अर्थव्यवस्था में दोनो विशेषतायें परम्परागत व आधुनिक दिखाई देती है। अर्थात् भारत के विकास में सन्तुलन दिखाई देता है। जिसके कारण अर्थव्यवस्था मे भी असन्तुलन दिखता है। हम देखें तो देश में आज भी ऐसे लोग हैं जिन्हें दो समय का भोजन उपलब्ध नहीं है। सुबह खाकर शाम की चिन्ता करनी पड़ती है जिन्हें विकास की धारा छू तक नहीं गयी है। वहीं दूसरे ओर हम अपने ही देश में देखते हैं कि महानगरों में रोज लोग 50 हजार अपने ऊपर खर्च करते हैं। रिलायंस कम्पनी के मालिक श्री मुकेश अम्बानी 450 करोड़ का मकान बनवा रहे हैं। यह विसंगति इस अर्थव्यवस्था में देखने को मिलती है। ऐसी परिस्थिति में महात्मा गाँधी कि विचार की प्रासंगिकता पर प्रश्नचिन्ह लग जाता है। जबकि सर्वोदय का विचार के अनुसार

समस्त समाज के लोगों का उत्थान एवं समाज के अन्तिम सीढ़ी पर खडे व्यक्ति को भी मौलिक सुविधायें व आवश्यकताओं को पूरा करने का अवसर मिलना चाहिये। समाज पक्षपात से रहित समानता से मुक्त होना चाहियें

प्रारम्भ में सरकार जब समाजवाद लाने के लिये संकल्पित थी तब ऐसा लगता था कि सर्वोदय के विचार के अनुसार ही देश का विकास किया जायेगा परन्तु 1991 के आते आते अनेक ऐसे आर्थिक कारण बने जिसके अन्तर्गत सरकार को अपनी आर्थिक नीतियों में परिवर्तन करना पड़ा और धीरे–धीरे हम वैश्वीकरण और उदारीकरण की ओर बढ़ चलें आज जो सरकार की नीति है उसके अन्तर्गत सम्पन्न और विपन्न के बीच दूरी और बढ़ गयी है क्योंकि देशी व विदेशी निवेशकों को छूट मिलने के कारण पूँजीपति और धन कमाने के लिये निवेश कर रहे हैं व श्रमिक वर्ग इस दौड़ में पीछे छूट गया है क्योंकि उसकी आय में वह वृद्धि नहीं हो रही है। इसी कारण आज यह देखा जा सकता है कि कहीं दो समय का भोजन भी उपलब्ध नहीं है तो कहीं हजारों रूपया मदिरा व व्यसन पर दैनिक व्यय किये जाते हैं। ऐसे में सर्वोदय का सिद्धान्त क्रियान्वित होगा यह वर्तमान में हास्यास्पद लगता है।

8-A1. बाजारीकरण

वर्तमान समय की आर्थिक परिस्थितियाँ इस प्रकार की हैं कि प्रत्येक आर्थिक दशा सर्वथा भिन्न है। अर्थयुग की दशा में प्रत्येक व्यक्ति धन के पीछे भाग रहा है येन–केन–प्रकारेण धन प्राप्त करने की इच्छा ने प्रत्येक वस्तु व सेवा का बाजारीकरण हो गया है सेवा की भावना व सेवा की प्रवृत्ति धीरे–धीरे समाप्त होती जा रही है।

आज हम अपने परिश्रम द्वारा अर्जित साधन से अपना व्यय चलाने में संन्तुष्ट नहीं हैं साथ ही मितव्ययता का विचार भी मृतप्रायः हो गया सा लगता है क्योंकि आज लोग अपनी आर्थिक सीमा में रहकर व्यय नहीं करते वरन ऋण लेकर अपनी शान–शौकत बनाये रखना चाहते हैं। ''जितनी चादर उतने पैर पसारना'' वाली युक्ति आज भी व्यवहारिक नहीं हैं। बल्कि चारवॉक का विचार लोगों को भाने लगा है

''यावद जीवेम सुखम् जीवेन ऋणम् कृत्वा घृतम् पीवेत्''

इसी प्रकार भौतिक साधनों की लोलुपता समाज में बढ़ रही है जिसके कारण भौतिक साधनों को पाने की होड़ में हम इतने आगे बढ़ रहे हैं कि करने व न करने योगय सभी काम करने में भी परहेज नहीं करते। इसीकारण भौतिक व अभौतिक साधनों का सन्तुलन नहीं रह गया इसी असन्तुलन ने समाज में एकऐसी विषय स्थिति पैदा हो गयी है कि जिसका सामर्थ नहीं है। वह भी भौतिक साधन पाने के लिए प्रयास कर रहा है जिससे समाज में अपराध व अनैतिकता बढ़ती जा रही है। समाज में सेवा, संवेदनशीलता, उपकार जैसे कार्य आज अर्थयुग की दौड़ में धूमिल हो गये हैं।

कुछ समय पूर्व हम अनेक वस्तुयें सेवा के नाते लोगों को उपलब्ध कराया करते थे परन्तु आज वे सेवायें धन कमाने के लिये या धन कमाने का माध्यम बन गयी हैं। जैसे– कुछ समय पूर्व ही देश में गर्मी के मौसम में स्थान–स्थान पर प्याऊ लगाकर लोगो को निःशुल्क पानी पिलाने की व्यवस्था समाज के सम्पन्न लोग किया करते थे, परन्तु आज हम ऐसी व्यवस्था में लगभग 90 प्रतिशत कमी पाते हैं। क्योंकि पानी भी धर्नाजन का माध्यम बन गया है, पानी के पैकेट एक–एक रूपये में बिकने लगे हैं जो सम्पन्न वर्ग प्याऊ लगाकर सेवा व पुण्य अर्जित करता था वह अब पानी के पाउच व बोतल भरकर बेचने के व्यवसाय में व्यस्त है और धनार्जन के लिये उद्यृत है। इसी प्रकार लोग यात्रा पर या तीर्थयात्रा पर जाया करते थे तो उन्हें रहने ठहरने के लिये धर्मशालायें मिल जाया करती थीं जिन्हें सम्पन्न लोग अपने पूर्वजों के नाम से संचालित करते थे और सेवा द्वारा यश की प्राप्ति करते थे जिससे उनके परिवार की ख्याति तो होती ही थी साथ ही आत्मिक सुख की अनुभूति होती थी। पाप और पुण्य के प्रति हम संवेदनशील नहीं रहे हम पाप के परिणाम की चिन्ता न करते हुये भी हम उसे अपने लाभ के लिये करने में लगे हैं। तथा पुण्य के फल के प्रति हमारी रूचि नहीं है क्योंकि पुण्य का फल तत्काल नहीं मिलता। अतः हम अपने स्वार्थ को पूरा करने में जुटे हैं अब वह पाप हो या पुण्य। वे ही परिवार अब धर्मशालाओं का निर्माण न करके बड़े–बड़े होटलों का निर्माण कर अधिक से अधिक धन कमाना चाहते हैं और इस कार्य के लिये नैतिक अनैतिक सभी प्रकार के कार्य करते है। इस प्रकार हम देखते हैं कि समाज की सोच ही विपरीत हो गयी है पहले हम परिश्रम व ईमानदारी

से अधिक से अधिक धन कमाते थे और धर्म के अनुसार उसका 10 प्रतिशत सेवा कार्यों में व्यय किया करते थे और ऐसा मानते थे कि इस पुण्य से स्वर्ग की प्राप्ति होगी। हम स्वयं कष्ट सहकर भी लोगों को सुख देने का प्रयत्न करते थे। इसे धन का सदुपयोग मानते थे परन्तु आज की स्थिति सर्वथा भिन्न होती जा रही है। समाज में नैतिकता का आदर्श न होने के कारण आज दूसरे को सुख देना और स्वयं कष्ट सहना सम्भव नहीं लगता। क्योंकि यह व्यवहारिक माना जा सकता है इसका मुख्य कारण है कि हम भौतिक सुख को भी प्राथमिकता देते हैं न कि आत्मिक सुख को। हम अपने सुख को प्राथमिकता देते हैं। इसके लिये चाहे कितने भी लोगों को कष्ट क्यों न हो ऐसी स्थिति में पुण्य या मोक्ष के लिये धन को व्यय करना अपव्यय माना जाने लगा है। सभी अपने लाभ को बढ़ाने के लिये धन लगाना चाहते हैं इससे बाजारीकरण और प्रतिस्पर्धी होता जा रहा है। सभी सेवायें बाजार में बिक्री हेतु उपलब्ध हैं और इसी व्यवस्था से लोग अधिक से अधिक सम्पन्न होकर प्रसिद्ध होना चाहते हैं।

इस प्रकार की बाजारीकरण की प्रवृत्ति समाज में और भी अनेक अनैतिक, अनुचित आचरण को प्रोत्साहित करती है। जिससे समाज संवेदनहीन होता जाता है परिणाम स्वरूप सभी स्वकेन्द्रित हो जाते हैं। जबकि पश्चिम देशों में जहाँ भौतिकता का बोलबाला था वहाँ आज भारतीय दर्शन का प्रभाव बढ़ रहा है। जहाँ लोग योग सीख रहे हैं, बाबा रामदेव भी वहाँ प्रचलित हो रहे हैं। लोग भौतिकता से ऊबकर नैतिकता को अपना रहे हैं। विवाह को भी आदर्श मानकर एक सफल पारिवारिक जीवन जीने का प्रयास कर रहे हैं। भौतिक सुख साधनों को

छोड़कर हरेरामा—हरेकृष्णा मिशन से जुड़कर भगवान की भक्ति का आनन्द लेकर आत्मिक सुख पाने की ओर बढ़ रहे हैं। जबकि हम इसके द्वारा परित्यक्त जीवन को स्वीकार कर अपने आपको आधुनिक कहलाना चाहते हैं और अपने पारिवारिक जीवन व समाज की सुख शान्ति को नष्ट कर भारतीय संस्कृति को भी दाव पर लगा अपने पतन के मार्ग पर चल पड़े।

ऐसे में महात्मा गाँधी का सर्वोदय का संकल्प स्वप्न ही लगता है। क्योंकि उनके विचार थे कि अपरिग्रह व त्याग की भावना के साथ उपयोग करना ही श्रेष्ठ है इससे हम दूसरे का अधिकार नहीं छीनते व मितव्ययी जीवन जीकर "जियो और जीने दो" का सिद्धान्त चरितार्थ करते है तथा पीढ़ी दर पीढ़ी प्राकृति भण्डार का उपयोग सुनिश्चित कर देते हैं।

शिक्षा जिस पर सबका अधिकार है प्रत्येक बालक को शिक्षा मिलनी ही चाहिये परन्तु वर्तमान समय में यह देखकर अत्यन्त आश्चर्य होता है कि आज निजी क्षेत्र में स्कूल तो तीव्रता से स्थापित हो रहे हैं जो प्राथमिक से लेकर परास्नातक तक है। परन्तु वे सेवा हेतु नहीं है उनमें गरीब व्यक्ति निःशुल्क शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकता उसे ऊँची फीस या शुल्क देना ही होगा। अर्थात् शिक्षा देना सेवा का कार्य नहीं रह गया वह भी बाजारीकरण के दौर में या बाजारीकरण के द्वारा बिकने के लिये खड़ी है जो जैसा मूल्य दे वह वैसी शिक्षा खरीद सकता है। यह व्यवस्था बिक्री प्राथमिक से लेकर तकनीकि या व्यावसायिक शिक्षा तक है। प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में देखा यह गया कि आज थोड़ी स्तरीय सुविधा देकर प्रतिमाह 1500 सौ रूपये प्रतिमाह शुल्क

लिया जा रहा है। जब कि आज भी ऐसे हजारों परिवार है जिसका मासिक खर्च 1500 सौ रूपये में व इससे भी कम में चलता हैं ऐसी शिक्षा तो गरीबों को मिल ही न सकी तो सर्वोदय कैसे होगा परन्तु विद्यालय चलाने वालों कसे इससे कोई सरोकार नहीं वे तो अपना लाभ चाहते हैं और अपना अपने परिवार का जीवन सुखमय बनाना चाहते हैं। उन्हें गरीब के प्रति कोई सम्वेदना नहीं है। यह बाजारीकरण देश व समाज के लिये अत्यन्त घातक है। इससे समाज में अनेक विषमतायें जन्म लेगी। क्योंकि अनपढ़ भी धन कमाने का प्रयास करेगा और असफल होने पर अपराधी बनेगा और अपराधीकरण बढ़ेगा।

शिक्षा सबसे महत्वपूर्ण अंग है परन्तु यह सदैव समाजके अधिकार में रही है परन्तु जब से सरकार ने इसमें हस्तक्षेप किया शिक्षा दिश भ्रमित हो गयी। अतः शिक्षा समाज का दायित्व है साधन व संरक्षण सरकार का दायित्व रहना चाहिये।

जिस गाँधी के नाम पर सरकार बनती और चलती है उन्हीं के सिद्धान्तों की बली चढ़ाकर घोर बाजारीकरण में सरकार भी सहयोगी है। क्योंकि अनेक शिक्षण संस्थाओं का शुल्क सरकार ही निर्धारित करती है। वर्तमान केन्द्रिय सरकार ने IMA गुजरात का शुल्क 30 हजार से बढ़ाकर 1 लाख 20 हजार कर दिया अर्थात् अब प्रबन्धन का पाठ्यक्रम सम्पन्न वर्ग के बच्चे ही पढ़ सकेंगे और यदि कोई गरीब चाहे तो कर्ज ले फिर शिक्षा ग्रहण करने यह बाजारीकरण का ज्वलन्त प्रणाम है।

आज के इस बाजारीकरण के दौर में सभी कुछ बिक रहा है। खरीदने वाला चाहिये। वस्तुतः गाँधी जी के विचारों के अनुसार तो

मौलिक आवश्यकता की पूर्ति के लिये सभी को अवसर मिलना चाहिये केवल उन वस्तुओं का ही बाजारीकरण होना चाहिये जिनका उत्पादन लागत लगाकर किया जा रहा है व सम्पन्न लोगों को गरीबों के प्रति संवेदनशील होना चाहिये और अपनी आय का कुछ हिस्सा समाज के वंचित वर्ग की आवश्यकता पूर्ति सेवा व निर्धन वर्ग को योग्य बनाने हेतु करना चाहिये जिससे वे भी देश की सेवा में आगे आकर हिस्सा बंटा सके। बाजारीकरण गलाकाट नहीं होना चाहिये अन्यथा समाज की संरचना ध्वत हो जायेगी।

इसी परिप्रेक्ष्य में देखें तो आज यौन शिक्षा को देने की वकालत चल रही है। कुछ इसके पक्ष में हैं तो कुछ इसके विपक्ष में है। जो बात एक युवा अपनी आयु के साथ स्वयं सीखता है उसे शिक्षा में समाहित करना उचित नहीं है इससे अनैतिकता बढ़ेगी जबकि नैतिक शिक्षा को पाठ्यक्रम से हटा दिया गया। जिस प्रकार आज उपभोक्तावाद बढ़ रहा है जिसमें वस्तु के उपयोग व उसके बाद बेकार कर फेकने का प्रयलन चला है उससे प्राकृतिक साधनों पर अधिक दबाव पड़ रहा है व उत्पादकों पर भी अधिक उत्पादन का दबाव है। जिसके कारण स्वास्थ्य के लिये हानिकारक वस्तुयें भी उत्पादित की जा रही हैं व चलन में आ रही है। इसी प्रकार मानव जीवन में भी इस उपभोग व फेको की प्रवृत्ति बढ़ रही है। इसीकारण पारिवारिक जीवन व संयुक्त परिवार टूट रहे हैं। नैतिकता, सामाजिक जीवन मूल्यवान नहीं रह गया। यह समाज की उन्नति का मार्ग तो नहीं है यह गर्त में जाने का मार्ग है।

8-A2. उपभोक्तावाद

जैसे—जैसे बाजारीकरण तीव्र होता है वैसे—वैसे उपभोक्तावाद बढ़ता हैं उपयोगिता का स्थान उपभोक्तावाद या उपभोग ले लेता है। वस्तुओं का उत्पादन गुणवत्ता के आधार पर न होकर फैशन के आधार पर किया जाता है। उपभोक्तावाद के अंतर्गत जिन वस्तुओं का उतपादन व निर्माण किया जाता है वे दीर्घकालीन या लम्बे समय तक चलने वाली नहीं होती क्योंकि बदलते फैशल के कारण वस्तु का उपभोग यूज एण्ड थ्रो के सिद्धान्त के आधार पर किया जाता है। अर्थात् वस्तु जब तक फैशन में है तभी तक उसका उपभोग सम्भव है उसके बाद वह बेकार हो जाती है। इसी कारण उत्पादक वर्ग नित्य नये उत्पाद नये तत्वों के साथ बाजार में उतारता है जिससे लोग नये मॉडल से आकर्षित होकर उन्हें खरीदे व पुरानी वस्तु बेकार हो जाय या उसको उन लोगों द्वारा खरीद लिया जाये जो नयी नहीं खरीद सकते इस प्रकार अतः उपभोक्ताओं की संख्या में वृद्धि हो जाती है।

उपभोक्तावाद बढ़ने से उत्पादकता में वृद्धि होती है इससे रोजगार वृद्धि का एक चक्रीय क्रम प्रारम्भ हो जाता है हर क्षेत्र में रोजगार बढ़ता है। कीन्स के रोजगार सिद्धान्त के अनुरूप प्रभावपूर्ण मांग बढ़ने पर उपभोग बढ़ता है और उपभोग बढ़ने से रोजगार का चक्र गतिमान हो जाता है और तीव्रता पूर्वक रोजगार सृजन होने लगता है जिससे उपभोग भी तीव्रतापूर्वक बढ़ता है। परिणाम यह होता है कि जब तक उपभोग व अर्थव्यवस्था में दीर्घकालीन सन्तुलन नहीं आ जाता तब तक यह उपभोक्तावाद बढ़ता रहता है।

यहाँ उपभोक्तावाद से तात्पर्य अधिक से अधिक उपभोग करना व विलासिता के साधनों का अधिकतम प्रयोग करना चाहे उससे मानव शरीर पर या सामाजिक जीवन पर उसका विपरीत प्रभाव ही पड़े।

सन्तुलन के बाद भी यदि उत्पादन बढ़ाने का प्रयत्न किया जाता है तो उपभोक्तावाद पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। यह सही है कि उपभोक्तावाद बढ़ने पर उत्पादन रोजगार, आय पर सकारात्मक प्रभाव से समाज उन्नतशील हो जाता है। जीवनस्तर उच्च हो जाता है, परन्तु यह भी सही है कि प्राकृतिक संसाधनों पर अतिरिक्त दबाव पड़ता है जिसके कारण उनकी आयु कम हो जाती है। साथ ही समाज व पावरण के लिये हानि कारक पदार्थ भी व्यवहार में आ जाते हैं जिसका दुष्प्रभाव जीवन में व प्रकृति पर स्पष्ट दिखाई देता है जैसे – आज बॉलीबाल का उपयोग अत्यन्त अधिक व हरकाम के लिये होने लगा है जिसके दुष्परिणाम समाज, पर्यावरण व स्वास्थ्य पर स्पष्टतः दिखाई देने लगे हैं। भूमि के ऊपर भी इसके प्रतिकूल प्रभाव दिख रहे हैं।

उपभोक्तावाद के बढ़ने पर भौतिक व अनैतिक सभी प्रकार के आचरण बढ़ते हैं। संस्कृति पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है जैसा– वर्तमान समय में देखने को मिल रहा है। अशिष्टाचार, अनैतिक आचरण का मौन स्वीकृति प्राप्त होती जा रही है। महात्मा गाँधी का विचार था कि मानव जीवन में आध्यात्मिकता व भौतिकता के मध्य सन्तुलन रहना चाहिये भौतिक व आध्यात्मिक जीवन दोनों सफल होने चाहिये यह तभी सम्भव है जब हम "सादा जीवन उच्चविचार" का आदर्श सामने रखते हैं। इसी प्रकार जीवन में वस्तुओं का प्रयोग योगपूर्ण होना चाहिये अर्थात् केवल आवश्यकता के अनुरूप ही वस्तु लेनी चाहिये और शेष अन्य के उपभोग

के लिये छोड़ देनी चाहिये। संयम पूर्ण आवश्यकता पूर्ति को ही उपयोग कहा गया है। इससे प्राकृतिक साधनों पर अतिरिकत उत्पादन बढ़ाने का दबाव भी नहीं होता और प्राकृतिक सन्तुलन के साथ–साथ पर्यावरण व संस्कृति सुरक्षित बनी रहती है। साथ ही इसके दुरप्रभावी का सामना भी नहीं करना होता है। वर्तमान समय में ऐसा देखा जा रहा है कि उपभोग बढ़ाने के लिये उत्पादों के वास्तविक स्वरूप से भी छेड़छाड़ की जा रही है और उससे उसके उपयोग घातक बीमारियों को जन्म दे रहा है। जैसे– फल एवं सब्जियों में अतिरिक्त रासायनिक खाद डालने से उनका उत्पादन व आकार तो बढ़ गया है परन्तु उसका वास्तविक स्वाद नष्ट हो गया है। आज लोग प्रायः कहते हैं कि वस्तुओं में वह स्वाद नहीं है जो पहले हुआ करात था। इसी के साथ–साथ प्राकृतिक स्रोत भी दूषित होते हैं। जैसे– जल स्रोत नदियां, तालाब झरने इत्यादि। मानव जीवन संकटग्रस्त हो जाता है। अतः महात्मा गाँधी जी के विचार में उपभोक्तावाद वहीं तक उचित है। जहाँ तक वह मानव जीवन व प्रकृति पर प्रतिकूल दबाव नहीं बनाता है। सभी साधनों का त्यागपूर्ण प्रयोग संयंमित जीवन के लिये उचित है। उसी से हम मानव जीवन का कल्याण कर सकते हैं। समाज व प्रकृति से आवश्यक्तानुसार ही लेना जिससे उत्पादन व संसाधनों का अधिकतम लोग व दीर्घकाल तक प्रयोग किया जा सके। इसी कारण गाँधी जी अब सामाजिक जीवन या राष्ट्र की सेवा में लिये सत्य, अहिंसा के मार्ग पर चले तो उन्होंने त्यागपूर्ण उपयोग ही किया वे केवल जीवनयापन के लिये आवश्यक मात्रा ही लेते थे। एक धोती और एक पंछा ही उनकी पोशाक थी। सादा जीवन जीकर उन्होंने मूल्यों की रक्षा की।

8-B. कुटीर उद्योग का महत्व

भारत में कृषि की प्रधानता व जनाधिक्य होने के कारण विशेष महत्व के हैं क्योंकि उन उद्योगों के द्वारा अधिकतम लोगों को रोजगार उपलब्ध कराया जा सकता है। गाँधी जी ने बड़े उद्योगों की स्थापना का विरोध किया जिसने अधिकांश लोगों को बेरोजगार हो जाये अथवा मशीनों का अधिकतम प्रयोग हो। ऐसे उद्योगों की स्थापना भारत जैसे श्रम प्रधान देश के लिए उचित नहीं है। उनका विचार था कि औद्योगिकरण भारतीय परिवेश के अनुसार होना चाहिए यहां जनसंख्या की अधिकता के साथ–साथ गरीबी अपने परे चरम सीमा पर है। अतः यहाँ बड़ी–बड़ी मशीनों से युकत उद्योग लाभकारी नहीं होंगे। उनका दृढ़ विश्वास था कि बड़ी–बड़ी मशीनों के द्वारा मानव का शोषण होताहै। वे कहते थे ''मैं नहीं कह सकता कि भारत जैसा विशाल देश जहाँ करोड़ो लोगों को वर्ष में चार महीने बेकार रहना पड़ता है। वह बड़े उद्योगों को प्रोत्साहित करके कैसे खुशहाल हो सकता है। उन बड़े उद्योगों को छोड़कर जो संभवतः गाँव में नहीं चलाये जा सकते। अन्य समस्त बड़े तथा केन्द्रीकृत उद्योग का अर्थ होगा कि लाखों लोग बेरोजगार हो जाये और उनके लिए कोई सम्मानजनक रोजगार की व्यवस्था न कि गई हो तो वे भूखे मरेंगे।'' इसीलिए गाँधी अपनी नित्य उपयोग की समस्त वस्तुयें वे ही खरीदते थे जो गाँव में बनती हो। भले ही उन वस्तुओं में कुशलता न हो परन्तु यदि उन्हें प्रोत्साहन देगे तो उनमें कुशलता आ जायेगी। हमें कुटीर उद्योगों की स्थापना करके ग्रामीण लोगों की कुशलता को प्रोत्साहित

करना चाहिए जिससे उनका विकास हो सके और उनकी प्रतिभा को जाग्रत कया जा सके। ''17 वर्षों तक भारी उद्योगों से जब देश को बहुत हानि हो चुकी तो नेहरू जी ने कहा कि, महात्मा गाँधी सही कहते थे और 11 दिसमबर, 1963 को संसद में योजना पर बोलते हुए पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कहा मैं अधिकाधिक महात्मा गाँधी के बारे में सोचने लगा हूँ। मैं पूरी तरह से आधुनिक मशीन का प्रशंसक हूँ और बेहतरीन मशीन और बेहतरीन तकनीक चाहता हूँ। लेकिन हमारे देश में हालात यह है कि हम आधुनिक युग में चाहे जितना बढ़ जाय उसका बहुत दिनों तक हमारे लोगों की बहुत बड़ी संख्या परा कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। उन्होंने उत्पादन में भागीदार बनाने के लिए कोई और उपाय करना होगा चाहे उत्पादन यन्त्र आधुनिक तकनीक के मुकाबले में बहुत कुशल न हो। इससे साफ जाहिर है कि नेहरू जी बड़े पैमाने के ओद्योगीकरण की जगह लघु स्तरीय उत्पादन की मंशा रखने, लगे थे किन्तु यह भाव उनके महाप्रयाय के मात्र पाँच माह पूर्व का है। क्योंकि गाँधी जी जानते थे कि बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण किये जाने का परिणाम यह होगा कि होड़ और बाजार की समस्याएँ पैदा होगीं और गाँव का शोषण होगा। इसलिए हमें इस बात पर आग्रह रखकर चलना चाहिए कि गांव आत्म निर्भर हो। यदि ग्रामीण क्षेत्रों का यह स्वरूप कायम रखा जाये तो फिर इस पर कोई आपत्ति नहीं की। गाँव वाले आधुनिक यंत्र और औजारों का उपयोग करें। जैसे– यंत्र, औजारों का जो वे आसानी से प्राप्त कर सके हा। इन यंत्रों का उपयोग दूसरों के शोषण के लिए नहीं हो।

8-B1. आर्थिक दृष्टि से

भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश में छोटे उद्योग आर्थिक दृष्टि से समृद्धि का सूचक है क्योंकि देश में विविधतापूर्ण प्राकृतिक सम्पदा का सदृपयोग तभी सम्भव है जब क्षेत्रीय आधार पर प्राकृतिक स्रोत से सम्बन्धित लघु उ़द्योग स्थापित किये जाये। इनकी स्थापना से रोजगार का सृजन होगा। साथ ही क्षेत्रीय संतुलन सथापित होगा। भारत में कृषि इतनी सक्षम नहीं है कि किसानों को वर्ष भर रोजगार उपलब्ध करा सके। इससे उसे वर्ष भर काम तो मिलेगा ही साथ ही वह अपने कृषि उत्पाद का ही सद्उपयोग करके उत्पादन करेगा और अपनी आय का एक अन्य स्रोत खड़ा कर सकेगा, जिससे उसकी आर्थिक दशा में सुधार आयेगा।

ग्रामीण अंचलों में बेकार पड़ी श्रम शक्ति का इसके द्वारा सद्उपयोग किया जा सकेगा ऐसे भूमिहीन मजदूर जो वर्ष में अधिकतम 120 दिन रोजगार पाते हैं उन्हें भी वर्ष में कम से कम 240 दिन से 270 दिन के बीच कार्य मिल सकेगा। ग्रामीण क्षेत्रों की आर्थिक विपन्नता की स्थिति में धीरे–धीरे सुधार आयेगा और ये ग्रामीण क्षेत्र अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारते हुये देश की आथिक स्थिति को सहयोग देते हुये राष्ट्रीय आय की वृद्धि में भी अपना महत्वपूर्ण योगदान देंगे। कुटीर उद्योग ऐसी तकनीक का प्रातः उपयोग करते हैं जो अधिक जटिल नहीं होती इस कारण उसका उपयोग ग्रामीण लोग कुशलतापूर्वक कर लेते हैं।

भारत में छोटे उद्योग ही जनसामान्य की आवश्यकताओं की पूति करता रहा है और लघु उद्योग की कुशलता अत्यन्त उच्च शिखर

पर भी जिसे आज की आधुनिकतम तकनीक भी नहीं पा सकी है। जैसे – एक बार औरंगजेब के दरबार में उसकी पुत्री गेबुननिशा छह साड़ियों को एक साथ लपेट कर आयी तो राजा ने कहा सलीके से पहना करो अर्थात् उस समय हम कुटीर उद्योग या हथकरघों के द्वारा चार सौ (400) का धागा बनाया करते थे। आज श्रेष्टतम तकनीक से हम केवल 250 काउण्ट का धागा ही बना पाते हैं। इसी प्रकार ढांका का मलमल विश्व प्रसिद्ध था जो एक अंगूठी से बीस राज का धान निकल जाता था। इसी प्रकार जब ओरछा के राजा से मिलने जहाँगीर आया (जहाँगीर ओरछा नरेश श्री वीरसिंह जू देव का मित्र था) तो एक कारीगर ने उन्हें आम की सूखी गुठली भेंट की तो जहाँगीर ने नाराज होकर कहा यह क्या हिमाकत है तो कारीगर ने कहा हुजूर जरा गुठली फोड़कर तो देखिए तब जहाँगीर ने गुठली तोड़ी तो उससे 20 मीटर सिल्क निकला जिससे उसने जहाँगीर को पगड़ी बाँध दी। हमारे बुन्देलखण्ड में भी इस प्रकार का कला कौशल विख्यात था। अर्थात् हमारी कला कौशल जो परंपरागत तकनीक पर आधारित थी वह श्रेष्टतम तकनीक पर थी।

कुटीर उद्योगों की स्थापना देश के संन्तुलित विकास के साथ–साथ आर्थिक विकास के लिए भी आवश्यक है क्योंकि यहाँ कि आर्थिक प्रणाली के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को सरकार सार्वजनिक क्षेत्र में रोजगार उपलब्ध नहीं करा सकती इसलिए इस प्रकार की नीति की स्थापना करना जिससे कुटीर उद्योगों का अधिक से अधिक प्रोत्साहन हो और लोग आत्मनिर्भर हो सकें। इस प्रकार राष्ट्रीय आय एवं प्रति व्यक्ति आय बढ़ेगी। देश में उपलब्ध व्यापार प्राकृतिक सम्पदा जो उपयोग न किये जाने के कारण बेकार चली जाती है उसका सद्उपोग

कुटीर उद्योग के द्वारा आसानी से किया जा सकता है। इसी प्रकार भारत के ग्रामीण क्षेत्र में इस प्रकार का कला कौशल छिपा है जिसे बहुत थोड़े प्रोत्साहन की आवश्यकता है जो विश्व में भारत का नाम प्रसिद्ध कर सकता है जैसे – बिहार के गाँव में रहने वाले किसान ने एक ऐसे पंखे का निर्माण किया जिसमें एक बार चाभी भर दी जाये तो वह दो घण्टे तक लगातार हवा देता है। इसी प्रकार अपनी साईकिल में उसने इस प्रकार की व्यवस्था की, कि वह साईकिल चलाते हुए बिना रूके व डूबे नदी पार कर सकता है। ग्रामीण क्षेत्र में ही लौहार का काम करने वाला एक किसान अपनी भट्टी में इस प्रकार के कास्ट आयरन को बनाने में सुल हुआ जो 70 प्रतिशत अदृश्य हो जाता है। यदि इन लोगों को थोड़ा सा प्रोत्साहन मिले तो वे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर देश को गौरवान्वित कर सकते हैं। एक ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापक ने भुट्टे की डन्डी (दाना हटाने के बाद) को जलाकर इस प्रकार के पाऊडर का निर्माण किया जिससे डिटर्जेन्ट की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह से कपड़ों को धोया जा सकता है और इससे जल प्रदूषण भी नहीं होता। कुटीर उद्योग का महत्व देश के आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण है और इसमें अपार सम्भावनायें हैं। ये गेर परम्परागत साधन भी रोजगार में पर्याप्त मात्रा में वृद्धि कर सकते हैं व पर्यावरण सन्तुलन में सहायता कर सकते हैं। इसके साथ ही ऊर्जा की कमी को कुछ हद तक दूर किया जा सकता है जैसे सोलर एनर्जी या सौर ऊर्जा व कचरे से विद्युत उत्पादन इत्यादि। इसीप्रकार कचरे से खाद बनाकर खेतों की ऊर्वरक शक्ति को बढ़ाया जा सकता है। और नगरों को साफ भी रखा जा सकता है।

8-B2. सामाजिक दृष्टि से

सामाजिक दृष्टि से कम पूँजी के उद्योग सामाजिक समरसता का ताना बाना बुनते हैं क्योंकि कुटीर उद्योग एक दूसरे की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं अर्थात् सहनिर्भरता एवं सहआसतित्व का वातावरण तैयार करते हैं इससे सामाजिक संवेदनशीलता में वृद्धि होती है साथ ही आर्थिक समानता की भावना भी प्रबल होती है हमारे देश का परंपरावादी समाज इसी व्यवस्था पर आधारित रहा है इसी कारण समाज में व्यक्ति के स्थान पर काम को सम्मान देने की परम्परा रही है साथ ही परंपरागत व्यवसाय होने के कारण समाज में बेरोजगारी जन्म ही नहीं ले पाती थी क्योंकि व्यक्ति काम करने योग्य होकर अपने पारंपरिक एवं पारिवारिक कार्य में स्वतः ही जुड़ जाता था। इससे पारंपरिक कला कौश लमें भी वृद्धि होती थी।

आर्थिक दृष्टि से परस्पर निर्भरता सामाजिक वातावरण को स्वस्थ बनाये रखती है। जिसके परिणाम स्वरूप देश में एकात्मक की भावना प्रबल होती है जिससे सामाजिक उन्नति का मार्ग प्रशस्त होता है क्योंकि जब तक देश में स्वस्थ वातावरणा नहीं होगा तब तक उन्नति की सम्भावना नहीं होती। इसलिए यह आवश्यक है कि कुटीर उद्योग में लगे लोगों की एक दूसरे उत्पादक से आवश्यकता की पूर्ति होना उन्हें सामाजिक सम्बन्धों में नजदीकता लाती है जिसके कारण समाज में एक दूसरे से प्रेम और सहानुभूति की भावना बढ़ती है। और सभी एक दूसरे की आवश्यकता पूर्ति के लिए जुट पाते हैं। क्योंकि देश में संयुक्त परिवार की प्रथा थी जिससे एक दूसरे के लिये सहनशीलता

स्वाभाविक ही थी घरों में बड़ों का सम्मान व छोटों का संरक्षण स्वाभाविक था। परिवार पर कोई आँच नहीं आती थी क्योंकि सभी सामूहिक रूप से रहते थे व संगठित रहते थे। बड़े बुजुर्ग सभी समस्याओं का समाधान खोज लेते थे जिससे छोट लोगे अपने कार्य उचित ढंग से कर सकते थे।

इसलिए गाँधी जी ने देश की एकात्मकता के लिए व समाज को एक सूत्र में पिरोय रखने के लिए ग्रामोदय पर जोर दिया व लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना करके अधिकतम लोगों को रोजगार उपलब्ध कराने की व्यवस्था कराने को कहा। इससे सामाजिक संरचना को सुदृढ करने में सहायता मिलेगी।

वर्तमान समय में देशका लगभग 67 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में निवास करती है। यदि हम कुटीर व ग्रामोद्योग को प्रोत्साहित करते हैं तो हम समाज के एक बड़े वर्ग का कल्याण करने में सक्षम हो जाते हैं। साथ ही सामाजिक कल्याण हमारे लिए आसान हो जाता है। और सरलतापूर्वक समाज को एक सूत्र में पिरोया जा सकता हैं इसीकारण गाँधी जी चरखा कातने पर बल दिया करते थे व ग्रामोदय क लिए कम उद्योगों के द्वारा हर हाथ को काम व हर काम के लिए हाथ का संकल्प साकार हो सकता है। इसलिये सामाजिक सन्तुलन, रोजगार, प्राकृतिक सन्तुलन के लिये छोटे उद्योग अत्यन्त महत्वपूर्ण है। और सम्पूर्ण सामाजिक व राष्ट्रीय उत्थान की कुंजी हैं।

8-C. आर्थिक विकेन्द्रीकरण

विभिन्न आर्थिक सस्याओं के सम्बन्ध में गाँधी जी के विचार इतने अधिक अर्न्तसम्बन्धित है कि अन्य समस्याओं के सम्बन्ध में विचार किये बिना किसी एक समस्या के सम्बन्ध में समाधान निकालना सम्भव नहीं है। गाँधी जी किसी जीवनदर्शन या किसी मान्यताओं अथवा आदर्शों की प्रणाली निर्मित करना नहीं था वे सत्य और अहिंसा पर दृढ थे। उन्होंने राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, कृषि व श्रम, औद्योगिक व आर्थिक समस्या का समाधान अपने विचारों के अनुरूप अपने सिद्धान्तों का पालन करते हुए किया।

आर्थिक क्षेत्र मे वे एक सर्वोदयी समाज की रचना करना चाहते थे। गाँधी जी आर्थिक विकेन्द्रीयकरण और ग्राम आधारित उद्योग की व्यवस्था के प्रबल समर्थक थे। उनका मानना था कि यदि ग्रामीण उद्योग समाप्त होंगे तो देश के गाँव भी अस्तित्व ही मृतप्रायः हो जायेंगे क्योंकि बड़े पैमाने के उद्योग केन्द्रीकरण पर आधारित है इससे आर्थिक शक्ति का केन्द्रीकरण की पद्धति का अहिंसक समाज की रचना के साथ सामंजस्य नहीं बैठता क्योंकि बडे पैमाने का केन्द्रीकरण राष्ट्रीय हित में कदापि नहीं है। उनका मानना था कि बड़े पैमाने पर माल तैयार करने का पागलपन ही दुनिया के मौजूदा संकट के लिये उत्तरदायी है। जैसे आज हम देखते हैं कि बड़े उद्योगों की स्थापना से आपूर्ति में वृद्धि हुई जिससे आवश्यकता की पूर्ति भी हुई है परन्तु इससे प्राकृतिक साधनों का अंधाधुंध दोहन प्राकृतिक असंतुलन का कारण है। उत्पादक वर्ग भी उन्हीं वस्तुओं के उत्पादन में रूचि लेते हैं जिनमें उन्हें अधिक

लाभ होता है। जिसके कारण कहीं अति उत्पादन तो कहीं कम उत्पादन होता है जिससे मूल्य में उतार–चढ़ाव होता है जो राष्ट्रीय आर्थिक विकास के लिए तो घातक है ही साथ ही गरीबों की आर्थिक स्थिति को कमजोर बनाता है। राष्ट्रीकरण या केन्द्रीकरण के द्वारा हम अनेक दोषों को दूर नहीं कर सकते, जहाँ काम करने के लिये श्रम उपलब्ध न हो वहाँ मशीनों का प्रयोग उचित है ओर यदि काम कम और श्रम शक्ति अधिक है तो मशीनीकरण अभिशाप है। जैसा हम अपने देश में देख रहे हैं कि प्रत्येक काम मशीनों के अधीन होता जा रहा है ऐसे में ट्रैक्टर आ जाने से खेतिहर मजदूरों में बेरोजगारी बढ़ी है साथ ही उद्योगों, बैंकों मे भी कम्प्यूटर के द्वारा कार्य किये जाने के कारण बेरोजगारी बढ़ रही है। यह केन्द्रीकरण हम उन देशों की देखा देखी कर रहे हैं जहाँ श्रम शक्ति कम है और काम के अवसर अधिक। इस प्रकार की समस्त समस्याओं का समाधान आर्थिक विकेन्द्रीकरण द्वारा सम्भव हो सकताहै इस पर हमें गम्भीरतापूर्वक विचार करना होगा तथा समय और परिस्थिति के अनुरूप व्यवहार में लाना होगा। इससे सभी पुरूषों व महिलाओं का उत्थान सम्भव होगा जैसा– गाँधी जी चाहते थे ग्रामीण व ग्रामोन्मुख अर्थनीति द्वारा हम गाँवों को स्वावलम्बी और आत्मनिर्भर बना सकते हैं जहाँ आवश्यकतानुसार सभी वस्तुओं का उत्पादन किया जा सके साथ ही ग्रामीण कला कौशल का विकास सम्भव हो सकेगा।

केन्द्रीकरण के कारण विश्व की सम्पत्ति कुछ सम्पन्न राष्ट्रों के हाथों में और देश की सम्पत्ति कुछ पूँजीपतियों के हाथों में एकत्रित हो रही है इससे काम करने वालों का शोषण बढ़ रहा है। इसलिए

अमीर और गरीब के बीच की दूरी बढ़ती जा रही है। गाँधी जी विकेन्द्रीकरण के अन्तर्गत प्रत्येक गाँव में खादी उत्पादन पर बल देते थे चरखा उनके विचारों में ग्रामीण अर्थव्यवस्था का केन्द्र बिन्दु है यदि प्रत्येक व्यक्ति चरखा चलाकर सूत कातने का काम केवल एक घण्टे भी करता हे तो देश की वस्त्र की समस्या का समाधान शीघ्र हो जायेगा। गाँधी जी ने कहाकि "मैं उन सभी उद्योगों का राष्ट्रीकरण करना चाहूँगा जिनमें बहुत सारे लोग काम करते है।। उनकी कुशल और अकुशल मेहनत से जो कुछ भी उत्पन्न होगा उन पर राज्य द्वारा उन्हीं मजदूरों का स्वामित्व होगा"। उनके अनुसार आर्थिक समानता अहिंसक समाज की आधारशिला है। इसी कारण गाँधी जी ने ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त दिया उनके अनुसार समस्त सम्पत्ति समाज की है इसका प्रयोग विकेन्द्रित व्यवस्था के अंतर्गत होना चाहिये। यदि पूँजी सत्य है तो काम भी सत्य है। श्रम पूँजी से श्रेष्ठ है, अतः पूँजी को श्रम का नौकर होना चाहिए न कि उसका मालिक। यह तथ्य तभी साकार होगा जब हम आर्थिक विकेन्द्रीकरण की ओर कुशलता से बढते हैं।

गाँधी जी ने हक्सले और जेकरसन की भाँति कभी न तो "आधे–अधूरे लोकतंत्र" ओर न ही उदासीन विकेन्द्रीकरण पर विश्वास किया। वे केवल आर्थिक या राजनैतिक लाभ के लिये विकेन्द्रीकरण को नहीं चाहते थे। बल्कि वे तो सादा जीवन उच्च विचार और सांस्कृतिक और आध्यात्मिक आदर्श को समाहित करके ही विकेन्द्रीकरण चाहते थे। वे जीवन स्तर को उठाने के लिये ही नहीं सोचते थे वे चाहते थे कि सर्वांगीण जीवन का स्तर ऊपर उठे और गाँधी जी के लिये जीवन के साथ–साथ उसकी गुणवत्ता भी महत्वपूर्ण थी।

इन्हीं मूल्यों की रक्षा के लिये वे चाहते थे कि भारत का प्रत्येक गाँव और प्रत्येक घर में उत्पादन की एक छोटी सी इकाई स्थापित हो और परिवार के सदस्य इस उत्पादन इकाई के सहयोगी श्रमिक हो। गाँधी जी ने विकेन्द्रीकरण को बहुत सूक्ष्म व निचले स्तर तक लागू करने पर विचार किया।

8-C1. क्षेत्रीय कला का उपयोग

भारत जैसे विशाल देश में विविधितायें भरी पड़ी हैं। यहाँ प्रत्येक क्षेत्र अपने कला कौशल व परम्परा की अद्‌भुत मिसाल है। यदि आर्थिक दृष्टि से इसका सद्‌उपयोग किया जाये तो देश में आर्थिक सुदृढ़ता के साथ–साथ देश का समग्र विकास भी देखने को मिल सकता है। आर्थिक विकेन्द्रीकरण के द्वारा प्रत्येक क्षेत्र को अवसर मिलेगा तो दूसरी ओर उन पर यह दायित्व भी होगा कि वे अपने संसाधनों का मितव्ययी प्रयोग करके अपनी आवश्यकता की पूर्ति करे और आय में वृद्धि व आर्थिक समानता के रास्ते खोजे जिससे देश में सर्वोदय का संकल्प साकार हो सके।

आर्थिक विकेन्द्रीकरण का महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि प्रत्येक श्रम व साधन को अवसर मिलने के कारण क्षेत्रीय कला कौशल का भरपूर प्रयोग होता है जिससे उसमें उत्तरोत्तर विकास व कुशलता आती है। जैसे – हमारे देश में अनेक ऐसे क्षेत्र हैं जो आज भी हजारों वर्षों से अपने कला कौशल के लिये विख्यात रहे हैं और आज भी है। तथा उनका उत्पादन आज भी परम्परागत तकनीक व श्रम शक्ति के द्वारा होता है और जिसकी ख्याति अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर तो है ही साथ ही इसकी माँग भी समपूर्ण विश्व में भी है। ये उत्पाद आय अर्जित कर रहे हैं। श्रम को काम दे रहे हैं। उनकी कला कौशल का विकास कर रहे हैं तो देश के आर्थिक विकास व स्वावलम्बन में हाथ बटा रहे हैं कहीं–कहीं इन उत्पादन केन्द्रों में मामूली मशीनों का भी प्रयोग होने लगा है। परन्तु इससे श्रम बेरोजगार नहीं हुआ है। जैसे– बनारस की

बनारसी साड़ी का उत्पाद आज भी करघे पर कुशल कारीगरों के द्वारा किया जाता है। कंवीवरम् की शिल्क साड़ी सम्बलपुर की साड़ियाँ, चंदेरी की साड़ी, कोआ की नैट व डोरियों की साड़ी, उडीसा की पटोला शिल्क साड़ी, मैसूर की मैसूरी सिल्क साड़ी इत्यादि अपने अलग–अलग क्षेत्रों के उत्पाद है जिनका उत्पादन करघे द्वारा ही किया जाता है और अलग–अलग डिजाइन बनाये जाते हैं। जिनसे इनकी पहचान होती है। ये कुशल कारीगर द्वारा बनती है। परम्परागत व पीढ़ी दर पीढ़ी यह कुशलता हस्तान्तरित होती जा रही है। लोग कई पीढ़ियों से इस कार्य में लगे हैं। यह क्षेत्रीय कला के प्रयोग का प्रत्यक्ष उदाहरण है। इसी प्रकार तमिलनाडु शिवाकाशी के पटाखे, मोरवी की घड़ियां, मुरादाबाद का पीतल का काम, फर्रूखाबाद का जदोजी का काम, उत्तर प्रदेश के तकिया ग्राम के लकड़ी के वर्तन जो दैनिक उपयोग में लाये जाते हैं वहाँ लगने वाले मेले में बिकते हैं। बंगाल का तांत सिल्स, राजस्थान का राजस्थानी छापे की साड़ियां व अन्य वस्त्र, अलीगढ़ व हाथरस के ताले, रामपुर के चाकू, कन्नौज का इत्र, इन्दौर के सिले सिलाये कपड़े, कानपुर व आगरे का चमड़ा उत्पाद, आगरा का ही पेठा व दाल मोठ, जयपुर व जोधपुर की संगमरमर की मूर्तियाँ, हापुड़, मेरठ का गुड़, खामगाँव का चाँदी का सामान इत्यादि अनेक ऐसे उदाहरण हैं जो इस बात का प्रमाण देते हैं कि देश में विविध क्षेत्रों में विविध प्रकार के उत्पादन बड़ी कुशलता से किये जाते हैं जिससे क्षेत्रीय कला का विकास होता है साथ ही उत्पादन की कुशलता में उत्तरोत्तर वृद्धि होती है जो पीढ़ी दर पीढ़ी जारी हैं यह तभी सम्भव है जब विकेन्द्रीय व्यवस्था लागू है। अर्थात् हर क्षेत्र अपने यहाँ के कौशल के

अनुरूप उत्पादन स्वतंत्रतापूवक करता है। इसके अतिरिक्त यदि कुछ उत्पादों को बड़े उद्योग में न उत्पादित किया जाये व वे इन कुटीर उद्योगों हेतु संरक्षित हो इन क्षेत्रों का और विकास सम्भव है साथ ही और भी छोटे छोटे क्षेत्रों में भी अनेक विविध प्रकार के उत्पादन क्षेत्रीय कला कौशल के आधार पर किये जाते हैं और आवश्यकता की पूर्ति करते हैं परन्तु आर्थिक विपन्नता के कारण वे धीरे–धीरे मृतप्रायः हो रहे हैं इससे रोजगार छिनने का खतरा है व बेरोजगारी बढ़ने की भारी आशंका है यदि इन्हें मामूली आर्थिक सहायता दी जाये तो ये आत्मनिर्भर तो होंगे ही साथ ही अन्य लोगों को रोजगार उपलब्ध करायेंगे। जैसे– रानीपुर व वस्त्र उद्योग, तालबेहट का लोहे के बर्तन व औजार का उद्योग बाँदा का सोहन हल्वा, कालपी की गुजिया आदि इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। इनके विकास से भी देश की उन्नति सम्भव है।

प्रकृति भी हमें विकेन्द्रीकरण की सीख देती है। इसी कारण देश के विविधि क्षेत्रों में विविध प्रकार की भौगोलिक व जलवायु पायी जाती है जिसके कारण क्षेत्रानुसार अलग–अलग प्रकार का उत्पाद होता है जिसमें वहाँ के किसानों को परम्परागत कुशलता हासिल है जो पीढ़ी के अनुसार हस्तान्तरित हो रही है। जैसे– पंजाब में गेहूँ का उत्पादन, कश्मीर में केसर, मलिहाबाद में आम, विदर्भ में ज्वार, बाजरा, मक्का, दक्षिण प्रान्तों में काजू, चीकू इलायची, लौंग, सुपारी, नारियल, महाराष्ट्र में केला, सन्तरा, बिहार में परवल, लीची इत्यादि उत्पाद विविधता व प्रकृति के विकेन्द्रीकृत स्वभाव के कारण ही होते हैं। इसलिये देश में यदि विकेन्द्रित की स्थापना हो तो आर्थिक समानता का वातावरण स्थापित होगा जिसमें सामाजिक समरसता के साथ'–साथ

सभी को समान वातावरण, समान अवसर प्राप्त होंगे, सभी को कुशलता में वृद्धि होगी जिससे देश समृद्ध होगा व समान आर्थिक उन्नति के साथ'—साथ नैतिक मूल्यों की भी उन्नति करेगा व क्षेत्रीय कला कौशल का अधिकतम उपयोग हो सकेगा।

8-C2. कम पूँजी

कम पूँजी से तात्पर्य ऐसे उद्योग से है जो कम संसाधनों व श्रम पर आधारित हो व पूँजी भी कम लगे ऐसे उद्योगों में वे सभी कार्य किये जा सकते हैं जो किसी बड़े उद्योग में किये जाते हैं। जैसे कपड़ा उद्योग, बीड़ी उद्योग, लोहा, चमड़ा, खाद्य पदार्थों का संस्करण कर उत्पादन करना इत्यादि। इससे श्रम का योग्यता के अनुसार उपयोग किया जा सकता है। योग्यतानुसार उन्हें अलग अलग कार्यों में लगाया जा सकता है। इस प्रकार श्रम का विकेन्द्रीकरण भी किया जाना सम्भव है। अतः कम पूंजी के उद्योग देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ हो सकते हैं और भारत में है भी।

जब देश में आर्थिक विकेन्द्रीकरण को अपनाया जाता है तो देश में स्थान–स्थान पर लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना की जाती है स्थानीय साधनों का प्रयोग करके उत्पादन बढ़ाया जाता है। साथ ही कला कौशल की उन्नति होती है। जो लोग साहसी व जोखिम उठाते हैं वे उत्पादन में आगे बढ़ते हैं सबसे महत्वपूर्ण विषय यह है कि इन कुटीर व ग्राम आधारित उद्योगों में कम पूँजी में ही काम कियाजा सकता हैं इसका कारण यह है कि इसमें कोई बड़े भूखण्ड की आवश्यकता नहीं होती न ही बड़ी इमारत या भवन की आवश्यकता रहती है इन्हें घर पर ही एक स्थान या कमरे में स्थापित किया जा सकता है साथ ही बड़ी या भारी मशीनों की आवश्यकता भी नहीं रहती, कम पूंजी की कुछ मामूली मशीनों से ही उतपादन किया जा सकता है तथा कम पूंजी के अनुसार ही आगम की प्राप्ति सम्भव हो जाती है।

अतः ऐसे उद्योगों से उद्यमी तो स्वयं आत्मनिर्भर होता ही है साथ अन्य लोगों को रोजगार उपलब्ध कराने में सक्षम होता है। कम पूंजी के कारण आर्थिक बोझ उद्यमी पर कम पड़ता है। साथ में उद्यमी निरंतर अपनी कुशलता में विकास करके उत्पादन को कलात्मक रूप में विकसित करता है व उसकी गुणवत्ता में भी सुधार निरन्तर होता रहता है। दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि कमपूंजी के कारण स्वदेशी तकनीक व परम्परागत तकनीक का ही प्रयोग किया जाता है जिससे पर्यावरण सन्तुलन के साथ–साथ संसाधनों का मितव्ययी प्रयोग किया जाता है जिससे उन संसाधनों की दीर्घजीविता सुनिश्चित हो जाती है। इसके साथ'–साथ उत्पाद का भी मितव्ययी प्रयोग होता है। जिसके कारण उपभोक्तावाद या उपभोक्ताओं के मध्य प्रतिस्पर्धा नहीं जन्म ले पाती।

नयी व युवा पीढी भी कम पूंजी के कारण साहसपूर्वक अपनी शिक्षा पूर्ण करने के पश्चात् इस प्रकार के उद्योग स्थापित करने का साहस कर सकते हैं। इस कारण बेरोजगारी की समस्या पर भी अंकुश लगाया जा सकता है। देश के आर्थिक विकास के लिए आर्थिक विकेन्द्रीकरण व कुटीर एवं ग्राम आधारित उ़द्योग आवश्यक है जिनमें कम पूंजी लगती है।

यदि हम सूक्ष्म विश्लेषण करते हैं तो हम पाते हैं कि बड़े–बड़े उद्योग भी किसी न किसी रूप में भले ही वह छोटे स्तर पर हो विकेन्द्रीकृत उद्योग को प्रोत्साहित करते हैं। बड़े उद्योग अपने उद्योग के सभी काम स्वयं नहीं करते बल्कि अनेक छोटे – छोटे काम लघु उद्योगों द्वारा कराते हैं और उन पर आश्रित होते है। जैसे – भारत हैवी

इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड, (बी0एच0ई0एल0) झाँसी में ट्रांसफार्मर बनाने में लगने वाले हिस्सों में से कुछ में चाँदी की पॉलिस की जाती है वह भारत हैवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड छोटी इलैक्ट्रोप्रेटिंग करने वाली एन्सलरी से करवाता है इसी प्रकार ट्रांसफर की पैकिंग भी निजी क्षेत्र से करायी जाती है। इसी प्रकार रेलवे भी छोटे–छोटे काम ठेके पर निजी क्षेत्र से कराने लगा है। अतः विकेन्द्रीकरण वर्तमान समय में आर्थिक उन्नति व बेरोजगारी की समस्या का समाधान हो सकता है। व इसमें अमीर गरीब सभी सहभागी बन सकते हैं।

8-C3. कम लागत

गाँधी जी के आर्थिक दर्शन का बुनियादी सिद्धान्त अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत गाँधी जी की कल्पना के अनुसार प्रत्येक ग्रामीण स्वायत्त होगा तथा अपने ही निर्णय और जरूरतों के अनुसार अपने मामलों का निर्णय करेगां ऐसे गाँवों की अर्थव्यवस्था उसकी जरूरतों और कच्चे माल की उपलब्धि पर आधारित होगी और इसमें कम लागत भी लगेगी अतः देश के आर्थिक विकास के लिए यह व्यवस्था अधिक हितकारी रहेगी।

आर्थिक विकेन्द्रीकरण के अंतर्गत लगने वाले लघु एवं कुटीर व ग्रामोद्योग में जहाँ एक ओर पूँजी कम लगती है अर्थात् उसकी स्थापना में स्थिर पूँजी कम लगती है। क्योंकि साधारण यंत्रों इत्यादि का प्रयोग किया जाता हैं वही इस प्रकार के उद्योगों में उत्पादन लागत या परिवर्तनशील लागत भी कम लगती है क्योंकि लागत बढ़ने का कोई मध्य ही नहीं होता। ऐसी इकाईयों में परिवार के सदस्य ही श्रमिक होते हैं और घर पर ही इस प्रकार की इकाईयाँ स्थापित हो जाती है। साथ ही उत्पादन भी स्थानीय स्रोतों पर आधारित व कम मात्रा में किया जाता है। इसलिये लागत कम हो जाती है। उत्पादन की आपूर्ति भी स्थानीय स्तर परकी जाती है उसकी बिक्री इत्यादि के लिये विज्ञापन की आपूर्ति भी स्थानीय स्तर पर की जाती है। उसकी बिक्री इत्यादि के लिए विज्ञापन प्रचार–प्रसार पर अतिरिक्त व्यय भी नहीं करना पड़ना इस कारण लागत कम ही रहती है। न्यूनतम लागत के आधार पर ही हम एक ऐसे समाज की स्थापना कर सकते हैं, जिसमें ग्रामीण जनता

अधिक सुखी और समृद्ध बने और प्रत्येक व्यक्ति को व्यक्तिगत ऐसे समाज की स्थापना कर सकते हैं, जिससे ग्रामीण जनता अधिक सुखी और समृद्ध बने और प्रत्येक व्यक्ति को व्यक्तिगत और एक अच्छे संगठित समाज के घटक के रूप में विकास का पूरा अवसर मिले। यह कार्य स्थानीय व्यक्तियों की सहायता और स्थानीय साधन सामग्री के अधिक से अधिक उपयोग द्वारा ही सम्भव हो सकता है।

विकेन्द्रीकरण के अन्तर्गत उपयोग की जाने वाली कच्ची सामग्री स्थानीय संसाधनों से ही प्राप्त हो सकती है। जो ग्रामीण व कुटीर उद्योगों के उत्पादन में काम आती है जिसके कारण लागत स्वाभाविक रूप से नीचे गिरती है क्योंकि परिवहन व्यय लगभग शून्य हो जाता है। इसके साथ ही यदि ग्रामोद्योग को प्रोत्साहित न किये जाये तो ये संसाधन बेकार रह जाते हैं और देश के विकास में योगदान नहीं दे पाते। इसलिये न्यूनतम लागत के कारण ही एक ऐसा माध्यम है जिससे हम ग्रामोद्योग को प्रोत्साहित कर सकते है।।

वर्तमान समय में लघु एवं कुटीर उद्योग की स्थिति बिल्कुल भिन्न है। क्योंकि आज बड़े उद्योग की तीव्र प्रतियोगिता के सामने वे बिल्कुल टिक ही नहीं पाते। बड़े उद्योग अपने उत्पादन को अधिक मात्रा में उत्पादित करते हैं जिसके कारण उनकी लागत कम हो जाती है साथ ही विज्ञापन प्रचार–प्रसार के द्वारा वे उसकी बिक्री बड़ा लेते हैं और अपने कुशल तंत्र के कारण उसे छोटे–छोटे स्थान तक पहुँचाकर बाजार पर अधिकार कर लेते हैं। ऐसी स्थिति में छोटे व्यवसायों का कम संसाधनों व सामान्य उत्पादन के साथ टिक पाना

आसान नहीं होता और ऐसे में लागत कम की कल्पना करना तो बिल्कुल व्यर्थ ही लगता है।

यदि कम लागत के साथ लघु व कुटीर एवं ग्रामोद्योग को प्रोत्साहित करना है तो हमें उनके उत्पादनों को संरक्षण देना होगा अन्यथा विकेन्द्रीकरण का उद्देश्य साकार नहीं होगा। आज बड़े उद्योग केन्द्रीयकृत होकर अधिकतम उत्पादन कर बाजार में कब्जा करना चाहते हैं और अधिक से अधिक आय प्राप्त करने की दौड़ को अधिक प्रतिस्पध्री बना रहे हैं। जिसके कारण आर्थिक विकेन्द्रीकरण के स्थान पर आर्थिक विषमता बढ़ती जा रही है। यदि हम ग्रामोद्योग आधारित व्यवस्था को प्रोत्साहित करते हैं तो हमारी अनेक आर्थिक सस्याओं का समाधान हो सकता है। जैसे– रोजगार वृद्धि, मांग पूर्ति का सन्तुलन, प्राकृतिक स्रोतों का मितव्ययी प्रयोग व आर्थिक समानता का समाज। वर्तमान समय की तीव्र प्रतिस्पर्धा के कारण गाँधी जी के विचारों का अनुकरण संदिग्ध लगता है। यद्यपि उसका अनुसरण समाज को संतुलित करने में एक बहुत बड़ा अस्त्र है।

8-D. पर्यावरण बचाव

गाँधी जी ने अपने जो भी विचार समाज के सामने रखे वे आर्थिक हो या सामाजिक उन विचारों में यह चिन्तन अवश्य था कि मानव जीवन व पर्यावरन का संतुलन बना रहे। किसी भी दशा में यदि संतुलन असंतुलित होता है तो मानव जीवन के लिये कई चुनौतियाँ सामने आ जाती है और उसके लिये खतरा पैदा हो जाता है। इसलिये उन्होंने ग्रामीण अर्थव्यवस्था, ग्रामोधार, ग्रामीण उद्योग, कुटीर उद्योग व सामाजिक समरसता के लिये अधिक जोर दिया और स्वयं भी इस दिशा की ओर बढ़े तथा अपने सम्पूर्ण जीवन में इस सिद्धान्त का पालन किया उन्होंने अपने आश्रम में बकरी पालन व चरखा कातने का नियम निर्धारित किया जिसका समय से कड़ाइ से पालन किया जाता रहा। इसी प्रकार अपने कार्य स्वयं सम्पादित करने पर भी गाँधी जी जोर देते थे चाहे वह शौचालय सफाई कार्य हो या आश्रम की सफाई या वस्त्र प्रछालन करना या प्रार्थना सभी कार्य आश्रम में सामूहिक रूप से करना निश्चित था। इस प्रकार की सभी क्रियाओं के पीछे पर्यावरण सन्तुलन की भावना ही थी। ताकि समाज का पर्यावरण का सन्तुलन बना रहे। इस दृष्टि से इसे हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं।

8D1. आर्थिक

गाँधी जी ने अपने आर्थिक विचारों मे 'यह स्पष्ट किया कि भारत जैसे श्रम प्रधान देश में यदि विकास की गति को तीव्र करना है तो यह आवश्यक है कि आर्थिक पर्यावरण को संरक्षित करते हुए देश

के ग्रामीण विकास पर अधिक जोर दिया जाये क्योंकि अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था का विचार इस दृष्टि से उत्तम है क्योंकि प्रत्येक ग्राम के लोग अपने ग्रामीण विकास के लिए स्वयं आवश्यकता के अनुरूप विकास के लिए स्वयं आवश्यकता के अनुरूप योजना बनाये व संसाधनों का उपयोग कर सामान्य जन समुदाय के साथ के ग्रामीण विकास को आगे बढ़ाये इससे विकास की सवस्थ प्रतिस्पर्धा उत्पन्न होगी व सभी एक दूसरे के प्रतिस्पर्धा उत्पन्न होगी व सभी एक दूसरे के प्रतिस्पर्धी न होकर सहयोगी होगे जिससे समाज में आर्थिक अपराधों को नियंत्रित करने पर बल मिलेगा क्योंकि सभी परिश्रम के द्वारा अपने जीवन का यापन करेगा तथा इससे सभी को समाान अवसरों की प्राप्ति होगी साथ ही ग्रामीण विकास से राष्ट्रीय विकास भी होगा गाँवों में उत्पादित सामान को शहरों में सरलता से बेचा जा सकेगा और आर्थिक शक्ति का प्रवाह शहरों से गाँवों की ओर और उत्पादन का प्रवाह गाँवों से ाहरों की ओर होगा जिससे गाँवों व शहरों में सामंजस्य स्थापित हो सकेगा। गाँव व शहर एक दूसरे के प्रतिस्पर्धी न होकर पूरक होंगे। इसमें रोजगार भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होगा परन्तु यदि बड़े उद्योगों की स्थापना तीव्रता पूर्वक की गयी तो आर्थिक पर्यावरण तो बिगड़ेगा ही साथ ही विपरीत परिणाम सामने आयेंगे जैसे– शहरीकरण, गाँवों के निवासियों का शहरों की ओर पलायन, गाँवों की उपेक्षा रोजगार की कमी, मशीनों का अधिक प्रयोग व पर्यावरण असन्तुलन। वर्तमान में यह समस्यायें सामने आ रही हैं क्योंकि देश में गाँधी जी के विचारों के विपरीत कार्य किये गये।

8D2. जलवायु

देश का आर्थिक विकास अत्यन्त आवश्यक है परन्तु वही विकास श्रेष्ठ व उत्तम माना जायेगा जिसमें पर्यावरण व जलवायु को क्षति न पहुंचे और न ही मानव समाज के लिये खतरा उत्पन्न हो। इसी कारण गाँधी जी के विचार विकेन्द्रीकृत अर्थव्यवस्था के पक्षधर थे और बढ़े व भारी उद्योगों तथा मशीनीकरण के गाँधी जी विरोधी थे क्योंकि इससे जलवायु पर भी विपरीत असर होगा सामान्यता जन का जीवन कठिन हो जायेगा और जलवायु दूषित हो जायेगी, इसलिये यह आवश्यक है कि भारत जैसे देश में श्रम प्रधान कार्य ही जलवायु के संरक्षण के लिए आवश्यक है।

गाँधी जी का विचार था कि मनुष्य को प्रकृति से आवश्यकता के अनुसार ही लेना चाहिए व अधिकाधिक प्रकृति के नजदीक रहना चाहिए जिससे व उसके प्रति संवेदनशील रहे उसे क्षति पहुँचाने का प्रयास न करे। इसी कारण गाँधी जी पशुपालन पर जोर देते थे इसके लिये उन्होंने स्वयं अपने आश्रम में बकरी पालन किया व सूती वस्त्र धारण करने पर बल देते थे। और उसी से बने हुये कपड़े पहने थे। अपने समस्त दैनिक कार्यों को स्वयं सम्पन्न करना व सभी को इसकी प्रेरणा देना।

सामान्य रूप से हम कह सकते है कि गाँधी जी ने अपने जीवन में आर्थिक पर्यावरण के संरक्षण के साथ–साथ जलवायु को संरक्षित करने पर जोर दिया जिससे देश में मानव समाज सदैव प्रसन्नता से रह सके। ताकि मानव समाज प्राकृतिक स्रोतों का दीर्घकाल

तक लाभ उठा सके। देश आर्थिक सम्पन्नता के शिखर पर पहुँचकर भी अपनी पहचान को बनाये रख सके।

अन्यथा यदि हमने सतत् –

1. प्लास्टिक का उपयोग
2. वृक्षों का कटना
3. अधिक जनसंख्या का भार
4. वर्तमान भौतिक व आधुनिक साधन का प्रयोग करना।
5. मोटर गाड़ी, पेट्रोलियम पदार्थों से पर्यावरण का नष्ट होना।
6. बड़े उद्योगों द्वारा कूड़ा करकट के द्वारा जलवायु प्रदूषित होना जारी रहा तो समाज नष्ट हो जायेगा।

अध्याय - ६

अध्याय - 9

1. निष्कर्ष

महात्मा गाँधी के जीवन पर दृष्टि डालने पर यह आभास होता है कि वे स्वयं अपने आप में एक संस्था, दर्शन व प्रयोगशाला थे। उन्होंने अपने जीवन में अनेक परिस्थितियों का सामना किया वे कभी भी अपने सिद्धान्तों से डिगे नहीं और न ही सत्य के मार्ग को छोड़ा मानव मात्र के लिए प्रेम का भाव और जीव मात्र के प्रति अहिंसा का भाव रखना उनके जीवन की विशेषता थी। न्याय व समाज के मूल्यों की स्थापना के लिए उन्होनें अपने आपको कसौटी पर कसा तो अपने परिवार के सदस्यों के साथ भी कोई रियायत नहीं की। इस मार्ग मे भले ही उनकी पत्नी ही क्यों न हो। उन्होंने अपने सदैव अपने नियमों का कठोरता से पालन कियां। जीवन के प्रारम्भ काल से लेकर जीवन पर्यन्त वे अपने जीवन में किये गये सत्य के प्रयोग को सभी के सामने दृढ़ता से रखने में सफल हो सके। उन्होंने अपने साथ भी कोई रियायत नहीं की। गाँधी जी ने तत्कालिक आर्थिक विचारों पर यूरोपीय विचारों के प्रभावों को सूक्ष्मता से देखा व उसे रोकने का प्रयत्न ही यथा सत्य उन्होंने किया। भारतीय जीवन पद्धति पर यूरोपीय विचार व जीवन पद्धति का प्रभाव जो बढ़ रहा था वह इसे भारतीय समाज के हित में नहीं मानते थे।

महात्मा गाँधी जी ने जिस रामराज्य की परिकल्पना की थी वे उसके लिए स्वयं पहल करने का प्रयास भी करते रहे। इसी कारण

उन्होंने अपरिग्रह के विचार को अपनाया। जिससे संचय की प्रवृत्ति को रोका जा सके तथा सभी को समान रूप से वितरण किया जा सके। और सभी समानता के भाव के साथ संसाधनों का वितरण करे जिससे समाज में अमीर व गरीब की दूरी समाप्त हो जाये। यही कारण है कि गाँधी जी ने श्रम को सम्मान देने की बात कही व उसे अपने जीवन में उतार, व्यक्ति का सम्मान, जाति, धर्म, या धन के आधार पर न होकर श्रम के आधार पर किया जाना चाहिए। इससे देश में उत्पादकता बढ़े व आवश्यकता के अनुसार पूर्ति की जा सके। मशीनीकरण के विरोध के पीछे उनका यह भाव था कि श्रमिकों के हाथ से काम न छिने और न ही उनकी कला कौशल को आघात पहुँचे। इसलिये वे कुटीर व लघु उद्योग को प्रोत्साहित करने के पक्ष में थे और वे विकेन्द्रित व्यवस्था के पक्षधर थे। उनका विचार था कि अधिक ग्रामीण आधार अल्प व्यवस्था होनी चाहिए जिससे अधिक से अधिक लोग हाथ बंटा सकेंगे और वे अपनी समस्या का स्वयं समाधान खोजकर संसाधन खड़े करेंगे व स्वयं विकास के सहयोगी बनेंगे।

स्वतंत्रता के पश्चात् देश में समाजवाद को पाने के लक्ष्य को ध्यान में रख मिश्रित अर्थव्यवस्था अपनायी गई। बड़े पैमाने के उद्योग स्थापित किये गये जिसके कारण ग्रामीण जनता शहरों की ओर पलायन कर गयी। साथ ही केन्द्रीकृत व्यवस्था लागू की गई। जिसके पक्ष में गाँधी जी कभी नहीं थे। इसी कारण समाज में संतुलन व्याप्त हो गया और अमीर और अमीर हो गये, गरीब और गरीब होते चले गये। ग्रामीणों का शहरों की ओर पलायन के कारण कृषि की उपेक्षा होने लगी। परिणामतः ग्रामीण क्षेत्रों में उत्पादन गिरा तो ग्राम व शहरों

में बेरोजगारी बढ़ती चली गई जो आज भी बढ़ती ही जा रही है। जनता को शोषण से बचाने व समाजवाद के लक्ष्य को पाने के उद्देश्य से सरकार ने राष्ट्रीयकरण की नीति का भी पालन किया। जिससे निजी निवेश कम होने लगा। इसका भी विपरीत प्रभाव अर्थव्यवस्था पर देखा गया। इसके साथ ही यह भी देखा गया कि राष्ट्रीयकरण की नीति के अंतर्गत भी जो निजी उद्यमी इस क्षेत्र में प्रवेश करना चाहते भी थे उन्हें लाइसेंस व इस्पेक्टर प्रणाली का सम्मान करना पड़ता था। जिसके कारण अयोग्य लोग भी इस दौड़ में प्रवेश करने का प्रयास करने लगे। इस कारण "टेबिल के नीचे की नीति" अर्थात् भ्रष्टाचार लागू हो गया और नगद घूस जिसे लोग सुविधा शुल्क कहने लगे, दिया जाने लगा। इसके माध्यम से नियम के विपरीत भी कार्य सम्पादित होने लगे। धीरे-धीरे भ्रष्टाचार इतना व्यापक व प्रभावी हो गया कि उसने अर्थव्यवस्था के समस्त क्षेत्रों पर अपना प्रभाव दिखाना प्रारम्भ कर दिया। इसी के साथ-साथ अर्थव्यवस्था में अफसरशाही का जोर अत्याधिक प्रबल हुआ। जिसके कारण अधिकारी के मुख से निकला शब्द ब्रह्मास्त्र माना जाने लगा। परिणाम स्वरूप अधिकारी वर्ग जो जनता के सेवक कहे जाते थे जनता पर शासन करने लगे और आर्थिक रूप से सम्पन्न हो गये। धीरे-धीरे सार्वजनिक उपक्रम घाटे में चलने लगे जिससे सरकार को राजस्व की हानि होने लगी। आर्थिक सर्वे की 1990 की रिपोर्ट के अनुसार केवल बंगला प्रांत में चलने वाले सार्वजनिक उपक्रमों से सरकार को जो राजस्व की हानि होती थी उसे 15 प्रतिशत बचाया जा सकता है। यदि इन उपक्रमों को बन्द करके उन कर्मचारियों को घर बैठे वेतन दिया जाये। सरकार को होने वाली

राजस्व की हानि ने उसे सचेत किया क्यों कि इस हानि से राजस्व का घाटा बढ़ता जा रहा था और विकास भी अपेक्षाकृत प्राप्त नहीं हो रहा था। अतः सरकार को भी सोच 1991 के आते–आते बदलनी पड़ी और उदारीकरण व निजीकरण का नया अध्ययन प्रारम्भ हो गया। उदारीकरण व वैश्वीकरण के वर्तमान दौर में तो अर्थव्यवस्था का ढाँचा ही बदल गया है। राष्ट्रीयकरण के स्थान पर निजीकरण व सार्वजनिक क्षेत्रों में विनिवेश सरकार ने प्रारम्भ किया, जिससे निजी निवेश का महत्व बढ़ गया साथ ही बहुराष्ट्रीय उद्योगों के आगमन से प्रतिस्पर्धा बढ़ी तो संरक्षण की नीति के समाप्त होने से कुछ देशी उद्योग मृतप्रायः होकर बन्द हो गये। जिसका परिणाम हुआ कि शहरी जीवन सुविधा व साधन सम्पन्न हुआ और ग्रामीण जीवन उस स्तर का नहीं हुआ और बेरोजगारी में वृद्धि हो गई।

बाजारीकरण व उपभोक्तावाद में समाज में नये अर्थयुग का सूत्रपात किया जिससे प्रत्येक वस्तु व सेवा के पीछे धन कमाने की प्रवृत्ति बलवान होने लगी और समाज में मानव मूल्यों का ह्रास हुआ। साथ ही संवेदनशीलता भी समाप्त होने लगी। समाज के आर्थिक विकास के लिए व सामाजिक एकात्मता के लिए आज भी वही मंत्र कारगर सिंद्ध होगा न कि उदारीकरण व निजीकरण। योग्यतानुसार सभी को प्रगति का अवसर देना है तो विकेन्द्रीकरण ही श्रेष्ठ है। सभी स्तर पर आर्थिक राजनीतिक व शासकीय शक्तियों का विकेन्द्रीकरण सभी अपने अपने क्षेत्र के विकास के लिए उत्तरदायी हैं एवं भारत जैसे समग्र देश के लिए यह आवश्यक है कि ग्रामीण क्षेत्र के निवासियों के निमित्त कारगर योजना बनाई जाये जिसके अन्तर्गत ग्रामीण संसाधनों

का प्रयोग स्थानीय स्तर पर हो व अपनी आवश्यकता के अनुसार साधनों का मितव्ययी प्रयोग कर उत्पादन किया जाये व क्षेत्रीय कला कौशल को प्रोत्साहित किया जाये जिससे रोजगार के अवसर सभी को प्राप्त हो सके व उन्हें भी यह अनुभव हो सके कि वे देश के विकास के अंग है। इसके साथ ही यह भी सम्भव होगा कि शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों में संतुलन स्थापित किया जा सकेगा और ग्रामीण क्षेत्र से शहरों की ओर पलायन नहीं होगा और न ही जिस कारण शहरों का वातावरण बिगड़ेगा।

ग्राम स्तर पर उत्पादन होगा व शहरों में बिक्री हेतु उपलब्ध होगा व बड़े लोगों को कच्चा माल भी गाँवों से प्राप्त हो सकेगां जिससे वे उत्पादन बढ़ाकर गाँवों की भी आवश्यकता पूरी कर सकेंगे। देश की आय में वृद्धि होगी। सम्पूर्ण देश विकास की ओर अग्रसर होगा यह राम राज्य की कल्पना साकार हो सकेगी और हम बापू के सपनों का भारत बनाने में सक्षम हो सकेंगे। स्वतंत्रता के पश्चात् देश की दशा व दिशा जो भी रही हो परन्तु हमें आज से प्रारम्भ करना है और राम राज्य की स्थापना का संकल्प लेना है। ''जब जागे तभी सबेरा''। 1000 मील की यात्रा अगर करना हो तो पहला कदम उठाना होगा। यह कदम जितना जल्दी उठेगा यात्रा उतनी ही शीघ्र पूरी होगी। हमें समग्र प्रयास करना है तभी लक्ष्य प्राप्त होगा।

आज भी यदि सामाजिक समरसता व आर्थिक संतुलन लाना चाहते हैं तो हमें आर्थिक विकेन्द्रीयकरण व क्षेत्रीय स्तर पर लघु व कुटरी उद्योग कों प्रोत्साहित भी करना ही होगा। हम रोजगार में वृद्धि कर सकते हैं व देश में रामराज्य स्थापित कर सकते हैं, साथ ही लघु

एवं कुटीर उद्योगों व श्रम प्रधान उद्यम की स्थापना से आर्थिक व सामाजिक पर्यावरण की रक्षा करने में सफल होंगे तो देश की जलवायु व वातावरण को मानव के अनुकूल रखने में सफल होंगे।

गाँधी जी ने अपने आप पर सयंम किया। अपने आपकी प्रवृत्ति व वृत्ति पर नियंत्रण किया। तभी दूसरों को उसके लिए प्रेरित किया। उनके आदर्शों के मार्ग पर चलकर आज भी इनकी रामराज्य की परिकल्पना को साकार किया जा सकता। अपने कर्मों के कारण ही गाँधी महात्मा गाँधी कहलाये। परन्तु यह हमारे देश व समाज का दुर्भाग्य है कि जिन गाँधी जी के नाम पर सरकार बनायी जाती है उन्हीं के आदर्शों का पालन न करके उसके विपरीत कार्य कर धीरे–धीरे समाजवाद से दूर पूँजीवाद की ओर बढ़ रही है जिसके कारण अमीर और गरीब के बीच की दूरी बढ़ रही है।

2. उपलब्धियाँ

महात्मा गाँधी जी जब स्वतंत्रता संग्राम में कूदे उस समय उनके विचारों की ख्याति दूर–दूर तक नहीं फैली थी परन्तु जब उन्होंने देश की आजादी के लिए सत्याग्रह द्वारा पूर्ण स्वराज्य की माँग की तब वे अपने सिद्धान्त को सामने रख सके और वे सत्यनिष्ठ होकर उस पर चले तब उसका प्रभाव धीरे–धीरे बढ़ना प्रारम्भ हुआ। उस प्रभाव की उपलब्धता यह हुई कि स्वतंत्रता संग्राम में जिधर गाँधी जी के कदम बढ़े वही समाज चल पड़ा उसे ही देश की आजादी का आन्दोलन मान लिया गया। जब नमक आन्दोलन हुआ तो लोग हजारों की संख्या में उसमें शामिल होकर अंग्रेजी हुकूमत के अत्याचारों को बिना प्रतिकार सहन करते आगे बढ़ चले। इसी प्रकार जब असहयोग आंदोलन का गाँधी जी ने आवाहन किया तो देश में पूर्ण स्वराज्य के लिये लोगों में अंग्रेजी हुकूमत का असहयोग प्रारम्भ कर दिया। इसी प्रकार स्वदेशी आन्दोलन में विदेशी सामान की होली जलाई गई तो बड़े–बड़े सम्पन्न अमीर लोगों ने खुलेआम विदेशी सामान का बहिष्कार किया इससे देशी लोगों को काम मिला उनकी आर्थिक दशा सुधारने की सम्भावना जागी। यह सब गाँधी जी के विचारों की उपलब्धता रही।

स्वतंत्रता के पश्चात् गाँधी जी अधिक समय तो जीवित नहीं रहे परन्तु आदर्शों व विचारों का पालन करने के लिये सरकार व समाज कृत संकल्पित दिखा। गाँधी जी ने चरखे व खादी पर जोर दिया था अतः देश में स्थान–स्थान पर खादी की योजना प्रारम्भ की गयी खादी का प्रयोग करने पर उसके मूल्यों में छूट देकर सस्ते में उपलब्ध कराया

जाने लगा इसका हेतु यही था कि ग्राम विकास हो और रोजगार मे वृद्धि हो जिससे देश की अर्थव्यवस्था में सुधार हो व भारत के लोगों की आर्थिक दशा सुधारी जा सके।

जैसा सर्वविदित है कि समय के साथ–साथ लोगों की स्मृति भी धूमिल होने लगी है और व्यक्ति नये आदर्श निर्मित कर लेता है। वैसा ही हमारे देश में हुआ। समय के साथ–साथ नीतियाँ बदलती गयी और देश अन्य देशों से प्रभावित होकर नयी नीतियों पर चलने लगा कुटीर उद्योगों के स्थान पर बढ़े व भारी उद्योगों की स्थापना की जाने लगी। ग्रामोद्धार की जगह शहरीकरण का जोर प्रारम्भ हो गया साथ ही यह दिखाई दिया कि हम गाँधी जी के विचारों से दूर जा रहे हैं। धीरे–धीरे हमारी सोच व विचार धारा भी बदल गयी। यहाँ यह विवेचन करना भी उचित होगा कि आज समाज की स्थिति को देखकर गाँधी जी के विचार व्यवहारिक नहीं लगते क्योंकि जैसा गाँधी जी कहते थे कि "यदि कोई एक गाल में चाँटा मारे तो उसे उसके सामने दूसरा गाल कर दो" यह स्थिति एक संवेदनशील समाज के लिए उचित हो सकती है। जैसे– जब सम्पूर्णानन्द जी उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री थे तो यदि विपक्ष का कोई सदस्य यदि सदन में खड़ा हो जाता था तो उसकी बात सुनते थे। और विपक्ष भी सरकार की अच्छे कामों की प्रशंसा करता था। सरकार विपक्ष के अच्छे सुझाव को मानती भी थी यह स्वस्थ परम्परा थी जो आज दिखाई नहीं देती। आज सरकार विपक्ष की बात मानने का तैयार नहीं है और न ही विपक्ष सरकार के अच्छे काम की प्रशंसा करता है वह अपनी हेठी समझता है। ऐसी स्थिति में एक गाल

के बाद यदि दूसरा गाल आगे कर दिया जाये तो व्यक्ति उसे मूर्ख समझते हैं।

जहाँ हम गाँवों के विकास के लिए जोर देते थे वहीं गाँधी के विचारों के विपरीत शहरीकरण व भारी उद्योगों की स्थापना पर जोर हो तो साथ ही विदेशी उद्योगों की स्थापना व विदेशी सामान के प्रति लोगों का मोह बढ़ा है। स्वदेशी का विचार धूमिल होता जा रहा हैं। आज भारी उद्योग की स्थापना से बेरोजगारी बढ़ गयी है। आर्थिक नीतियों की असफलता के बाद आज हम समाजवाद ग्रामोदय से मुँह मोड़कर बढ़ चले हैं। जिसके कारण देश में बेरोजगारी, अभाव का दौर चल रहा है। ऐसे में आज हमें गाँधी जी के विचार व उसकी उपयोगिता हमें पुनः स्मरण होने लगी है। क्योंकि सत्य शास्वत होता है। वह हर परिस्थिति में सत्य ही रहता है। भारत जैसे गाम प्रधान देश में विकास ग्रामोद्धार से ही सम्भव है। बड़े व भारी उद्योगों के स्थान पर लघु व कुटीर उद्योग ही श्रम प्रधान देश में रोजगार उपलब्ध करा सकते हैं।

स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग से हम संरक्षण के बिना भी अपने उद्योग को संरक्षित कर सकते हैं और देश की अर्थव्यवस्था को मजबूत आधार दिया जा सकता है। इसी प्रकार अहिंसा का मार्ग भी निश्चित ही विजय का मार्ग है। पत्थर दिल भी पिघल जाते हैं अहिंसा के मार्ग पर चल कर इसको जीता जा सकता हैं। क्योंकि अहिंसा अत्याचारी को अपने कर्मों पर विचार करने को मजबूर अवश्य करती है। सत्य का मार्ग व्यक्ति को विजयी तो करता ही है साथ ही आत्मिक सुख व शान्ति प्रदान करता है। सत्य कभी पराजित नहीं होता जैसे सर्य बादलों से ढक जाये भले ही परन्तु वह शाश्वत रहेगा।

इसी प्रकार देश में गाँधी जी के विचार अमूल्य निधि हैं जिनकी सदैव उपयोगिता रहेगी उससे उपलब्धियाँ मिली हैं और मिलती रहेगी। गाँधी जी के विचार सदैव हमारा मार्गदर्शन दीप स्तम्भ की भाँति करते रहेंगे, यही इसकी उपलब्धता है।

अध्याय - १०

अध्याय - 10

1. पुस्तक विवरणिका

1. बाबू की कारावास कहानी : सुशीला नायर
2. सर्वधर्म सम्भाव : यशपाल जैन
3. आत्मविश्वास और अभय : यशपाल जैन
4. महात्मा गाँधी एक जीवनी : बी0आर0 नन्दा
5. गाँधी विचार दोहन : किशोर लाल मशरूवाला
6. राष्ट्रपिता : जवाहर लाल नेहरू
7. धर्मनीति : महात्मा गाँधी
8. गाँधी जी ने कहा था : महात्मा गाँधी
9. स्वराज का अर्थ : महात्मा गाँधी
10. सर्वोदय : महात्मा गाँधी
11. अहिंसा का अमोघ अस्त्र : यशपाल जैन
12. अस्पृश्यता निवारण : यशपाल जैन
13. अस्वाद और रस–लालसा : यशपाल जैन
14. सत्य और धर्म : यशपाल जैन
15. अस्तेय और आत्मतोष : यशपाल जैन
16. गाँधी जी का जीवन प्रभात : अशोक
17. अपरिग्रह और जनशक्ति : यशपाल जैन
18. शरीर श्रम और कार्यसाधना : यशपाल जैन
19. गाँधी दर्शन : यशपाल जैन

20. अहिंसा और क्षमा	:	यशपाल जैन
21. गाँधी जी के सिद्धान्त नई पीढ़ी की दृष्टि	:	खुशवंत सिंह
22. स्वदेशी और राष्ट्रचेतना	:	यशपाल जैन
23. ब्रह्मचर्य और आत्मसंयम	:	यशपाल जैन
24. गाँधी का समाजवाद	:	डा0 पट्टाभि सीता रमैया
25. गाँधी विचार दोहन	:	किशोर लाल मशरूवाला
26. आत्मकथा	:	हरिभाऊ उपाध्याय
27. ग्राम्य सेवा	:	मान0 गाँधी आनन्द वर्धन
28. विद्यार्थियों से	:	गाँधी जी
29. गाँधी जी की आर्थिक योजना	:	मन्ना नारायण अग्रवाल
30. महात्मा गाँधी	:	बाबू केशव चन्द्रसेन
31. महात्मा गाँधी के ब्याख्यान	:	प्रका. पन्नालाल सिंहल
32. खादी मीमांसा	:	बाबू भाई मेहता
33. आज का विचार	:	गाँधी जी
34. गाँधी शताब्दी स्मारक ग्रन्थ	:	सम्पा ताराचन्द्र शर्मा

2. सारणी सामंक

महात्मा गाँधी के आर्थिक विचार तात्कालिक समय में प्रासंगिक थे और आज भी प्रसांगिक है उन्हे अपनाकर आज विकास को गति दी जा सकती है साथ ही आर्थिक व सामाजिक असन्तुलन को दूर किया जा सकता है। गाँधी जी के विचारों को समंको में नहीं बाँधा जा सकता और न ही इस संदर्भ में कोई सूचकांक या समंक उपलब्ध है। आंकड़ों की दृष्टि से इनका परीक्षण असम्भव है ये विचार अपने आप में दर्शन है। इन्हें व्यवहारिक रूप में परिणित करके इनके द्वारा आर्थिक परिवर्तन को देखा जा सकता है जो इन विचारों की सत्यता को प्रमाणित करने के लिये पर्याप्त आधार होंगे। भारत जैसे श्रम प्रधान व अधिक जनसंख्या वाले देश में इन विचारों का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है यहाँ ऐसे उद्योगों व्यवसायों की आवश्यकता है जिसमें श्रम की प्रधानता है।

गाँधी जी के विचार, सत्य, अपरिग्रह श्रम की प्रधानता, लघु एवं कुटीर उद्योग की स्थापना ग्राम विकास, कृषि आधारित अर्थव्यवस्था इत्यादि तथ्यों का पालन करके हम यहाँ सफल प्रयोग करके देख सकते हैं और अधिक से अधिक लोगों को रोजगार उपलब्ध करा सकता सकते हैं। साथ ही आर्थिक विकास की गति दे सकते हैं। अतः गाँधी जी के आर्थिक विचार के समंको, सारणियों की आवश्यकता नहीं है और ना ही वे उपलब्ध हैं। उन्हें तो वर्क की कसौटी पर नहीं बल्कि व्यवहारिक दृष्टिकोण से अपनाकर प्रमाणित किया जा सकता है।

आगे कुछ गाँधी जी के सिद्धान्तों एवं विचारों के आधार पर कुछ विशिष्ट लोगों के साक्षात्कार जो मैंने किये हैं जो प्रस्तुत हैं:—

1. गाँधी जी के जीवन दर्शन से आप प्रभावित हैं?
2. गाँधी जी उद्योगों का विकेन्द्रीकरण चाहते थे? क्या आप सहमत हैं?
3. गाँधी जी मशीनीकरण का विरोध करते थे। क्या उनका यह विचार आपको अच्छा लगता है?
4. गाँधी लघु व कुटीर उद्योगों का विकास चाहते थे। क्या उनके इस सिद्धान्त से देश आर्थिक रूप से सम्पन्न हो सकता है?
5. गाँधी जी के अपरिग्रह के सिद्धान्त से आप सहमत हैं?
6. गाँधी जी वैश्वीकरण के विरोधी थे? क्या उनके इस मत से आप सहमत हैं?
7. गाँधी जी की रामराज्य की कल्पना से सहमत हैं?
8. गाँधी जी का मत था इस संयुक्त परिवार प्रणाली देश की आर्थिक दशा सुधर सकती है?
9. गाँधी जी के ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त से आप सहमत हैं?
10. इस भौतिकतावादी युग में अगर गाँधी जी के आर्थिक विचारों को महत्व दिया जाये तो क्या देश की आर्थिक दशा मजबूत हो सकती हैं? और बेरोजगारी दूर हो सकती है?

गाँधी जी के विचारों के बारे में किये गये सर्वेक्षण में यह पाया गया कि सभी लोगों ने अपनी सहमति व्यक्त की। कोई भी उनके विचारों से विरक्त नहीं गया। क्योंकि भारत जैसे कृषि एवं श्रम प्रधान देश में विकास की धारा को तीव्र करने के लिए हमें गाँधी जी के विचारों का सहारा लेना होगा।